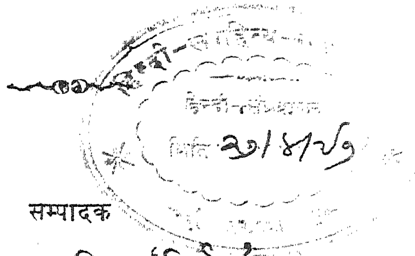
हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला— वाँ ग्रन्थ

स्त्री कवि-संग्रह



सम्पादक

ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'

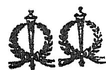
प्रकाशक

साहित्य-भवन-लिमिटेड,

प्रयाग

पंचम संस्करण] संवत् १९९७ [मूल्य ||)

प्रकाशक
साहित्य-भवन लिमिटेड,
प्रयाग।



मुद्रक—
श्री गिरिजा प्रसाद श्री
हिन्दी-साहित्य प्रेस,

दो शब्द

प्रयाग महिला-विद्यापीठ के सुयोग्य रजिस्ट्रार बाबू रामेश्वर प्रसाद जी ने, विद्यापीठ-परीक्षा के लिए एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता बतलाई, जिसमें हिन्दी की चुनी चुनी स्त्री-कवियों का संक्षिप्त परिचय और उनकी रचनाएँ संगृहीत हों। अतएव यह संग्रह विद्यापीठ की आवश्यकता को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है।

इस संग्रह में प्राचीन और वर्त्तमान, दोनों काल की चुनी हुई स्त्री-कवियों की चुनी चुनी रचनाएँ प्रकाशित की गई हैं और उनका सूक्ष्म रूप से परिचय भी दिया गया है। पुस्तक में दो खण्ड हैं। दोनों खण्ड आवश्यकतानुसार परीक्षार्थिनियों को पढ़ना होगा। पुस्तक में कवियित्रियों का नाम जन्म संवत् के क्रम से न रखकर परीक्षा की सुविधा के अनुसार रखा गया है। पाठक पाठिकाओं की सुविधा के लिए पुस्तक के अन्त में कठिन शब्दों के अर्थ भी दे दिए गए हैं।

प्रकाशक

विषय-सूची

पहला खण्ड

विषय-सूची

दूसरा खण्ड

पहला खण्ड

मीराबाई

ये राठौर राजकुल की कन्या थीं और मेवाड़ के महाराणा कुमार भोजराज से ब्याही गयी थीं। इनका जन्म समय १५७३ सं० माना जाता है। इनके गुरु रैदास थे ऐसी प्रसिद्धि है, पर इतिहास में दोनों के समय में अन्तर होने के कारण यह बात अमान्य हो गयी है। राजवंश में भगतिन के लिए स्थान नहीं होता। इसी कारण मीराबाई को अनेक कष्ट उठाने पड़े, अपमानित और कलङ्कित होना पड़ा, पर गिरिधर गोपाल से इनका नाता न टूटा। ये अटल बनी रहीं। अन्त में ये बृन्दावन चली आयी थीं। इन्होंने महात्मा तुलसीदास से एक समय सम्मति ली थी।

पद्य

[१]

पिय इतनी विनती सुण मोरी, कोई कहियो रे जाय।
औरन सूँ रस-बतिया करत हो, हमसे रहे चितचोरी।
तुम बिन मेरे और न कोई मैं सरनागत तोरी॥
आवण कह गये अजहुँ न आये दिवस रहे अब थोरी।
मीरा कहे प्रभु कब रे मिलोगे अरज करूँ करजोरी॥

[२]

मेरा बेड़ा लगाय दीजो पार प्रभुजी अरज करूँ छूँ।
या भव में मैं बहु दुख पायो ऐसा सोग निवार।
अष्ट करम की तलब लगी है दूर करो दुख पार॥
यो संसार सब बह्यो जात है लख चौरासी धार।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर आवागमन निवार॥

[३]

म्हारो जनम मरन को साथी।
थाँ ने नहिं बिसरूँ दिनराती॥
तुम देख्यों बिन कल न परत है जानत मेरी छाती।
ऊँची चढ़ चढ़ पंथ निहारूँ रोय रोय अँखियाँ राती॥

योसंसार सकल जग झूठी झूठा कुलरा नाती।
दोउ कर जोड्यों अरज करत हूँ सुण लीजो मेरी बाती ॥
यो मन मेरो बड़ो हरामी ज्यूँ मदमातो हाथी।
सतगुरु दस्त धर्यो सिर ऊपर आंकुस दै समझाती ॥
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर हरिचरणों चित राती।
पल पल तेरा रूप निहारूँ निरख निरख सुख पाती ॥

[४]

बसो मेरे नैनन में नन्दलाल।
मोहनी मूरति साँवरि सूरति नैना बने बिसाल।
अधर सुधा रस मुरली राजित उर बैजन्ती माल ॥
छुद्रघटिक कटितल शोभित नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भक्त बछल गोपाल ॥

[५]

करम गति टारे नाहिं टरे।
सतवादी हरिचन्द से राजा नीच घर नीर भरे।
पाँच पांडु अरु कुन्ती द्रोपदि हाड़ हिमालय गरे ॥
जग किया बलि लेण इन्द्रासन सो पाताल धरे।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर विष से अमृत करे ॥

[६]

मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई।
दूसरा न कोई साधो सकल लोक जोई ॥
भाई छोड्या बन्धु छोड्या छोड्या सगा सोई।
साधु संग बैठ बैठ लोकलाज खोई ॥
भगत देख राजी हुई जगत देख रोई।
अँसुवन जल सींच सींच प्रेम-बेलि बोई ॥
दधिमथ घृत काढ़ लियो डार दई छोई।
राणा विष को प्यालो भेज्यो पीय मगन होई ॥
अब तौ बात फैल पड़ी जाणे सब कोई।
मीरा राम लगण लागी होनी होय सो होई ॥

[७]

मीरा मगन भई हरि के गुण गाय।
सांप पिटारा राणा भेज्यो मीरा हाथ दियो जाय।
हाथ धोय जब देखण लागी सालिगराम गई पाय ॥
जहर का प्याला राणा भेज्या अमृत दीन्ह बनाय।
हाथ धोय जब पीवण लागी हो गई अमर अँचाय ॥
सूलसेज राणा ने भेजी दीज्यो मीरा सुलाय।
साँझ भई मीरा सोवण लागी मानो फूल बिछाय ॥

मीरा के प्रभु सदा सहाई राखें बिघन हटाय।
भजनभाव में मस्त डोलती गिरिधर पै बलि जाय॥

[८]

बंसी वारो आयो म्हारे देस,
थारी साँवरी सुरतवाली वैस।
आऊँ आऊँ कर गया साँवरा, कर गया कौल अनेक।
गिणते गिणते घिस गई उँगली घिस गई उँगली की रेख॥
मैं बैरागिणि आदि की थाँरे म्हारे कद को संदेस।
बिन पाणी बिन साबुन साँवरा हुई गई धुई सपेद॥
जोगिण होइ जंगल सब हेरूँ तेरा नाम न पाया भेस।
तेरी सुरत के कारणो धर लिया भगवा भेस॥
मोर मुकुट पीतम्बर सोहै घूँघरवाला केस।
मीरा के प्रभु गिरिधर मिल गये दूना बढ़ा सनेस॥

[९]

नातो नामकों मों सूँ तनक न तोड्यो जाय।
पाना ज्यों पीली पड़ी रे लोग कहै पिंड रोग।
थाने लांघन मैं किया रे राम मिलन के जोग॥
बावल वैद बुलाइया रे पकड़ दिखाई म्हारी बांह।

जाओ बैद घर आपने रे म्हारो नाँव न लेय।
मैं तो दासी विरह की रे काहे कूँ औषद देय॥
मांस गलि गलि छीजिया रे करक रह्या गल मांहि।
आँगुलियां से मूँदड़ी म्हारे आवन लागी बांहि॥
रहु रहु पापी पपीहा रे पिव को नाम न लेय।
जे कोई बिरहिन साम्हले तो बिन कारन जिव देय॥
खिन मंदिर खिन आँगने रे खिन खिन ठाढ़ी होय॥
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी म्हारी विथा न बूझै कोय॥
काटि कलेजो मैं धरूँ रे कौआ तू ले जाय।
ज्यों देसां म्हारो पिव बसै रे वे देखत तू खाय॥
म्हारे नातें नाम को रे और न नातो कोय।
मीरा व्याकुल बिरहिनी रे पिय दरसन दीजो मोय॥

[१०]

माई, मैंने गोविंद लीनो मोल।
कोई कहै सस्तो, कोई कहै महँगो, लीनो तराजू तोल॥
कोई कहै घर में, कोई कहै बन में, राधा के संग किलोल।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, आवत प्रेम के मोल॥

[११]

मोहि लागी लगन गुरु-चरनन की।

भव-सागर सब सूख गयौ है, फिकर नहीं मोहिं तरनन की।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, आस वही गुरु-सरनन की॥

[१२]

मेरे गिरिधर गोपाल, दूसरे न कोई।
जाके सिर मोर-मुकुट मेरो पति सोई।
तात मात भ्रात पूत अपनो नहिं कोई॥
छाँड़ि दई कुल की कानि करिहै कहा कोई।
सन्तन ढिंग बैठि-बैठि लोक-लाज खोई॥
चुनरी के किये टूक, ओढ़ि लीन्ह लोई।
मोतिन को हारि डारि गुंज-माल पोई॥
अँसुवन-जल सींचि-सींचि प्रेम-बेलि बोई।
अब तौ बेलि फैलि गई आनँद-फल होई॥
दूध की मथानिया बड़े प्रेम सों बिलोई।
माखन जब काढ़ि लियौ, छाछ पियै कोई॥
आई मैं भक्ति-काज, जगत जोहि मोही।
मीरा के गिरिधर प्रभु तारौ अब मोही॥

[१३]

मन रे, परसि हरि के चरन।
सुभग सीतल कमल कोमल, त्रिविध ज्वाला-हरन।

जिन चरन ध्रुव अटल कीनो राखि अपने सरन।
जिन चरन त्रयलोक नाप्यौ छलन बलि उद्धरन॥
जिन चरन-रज परसि पावन तरी गौतम-घरन।
जिन चरन कालीहि नाथ्यौ गोप-लीला-करन॥
जिन चरन धरियौ गोवर्धन गरब मघवा हरन।
दासि मीरा लाल गिरिधर अगम तारन-तरन॥

[१४]

तुम सुनो दयाल ! म्हारी अरजी।
भवसागर में बही जाति हौं, काढ़ौ तौ थारी मरजी।
या संसार सगा नहिं कोई, साँचा सगा रघुबरजी॥
मात पिता औ कुटुम्ब कवीला, सब मतलब के गरजी।
मीरा के प्रभु अरजी सुन लो, चरन लगावो, थारी मरजी॥

[१५]

मैं गोविंद-गुण गाना।
राजा रूठे नगरी राखै, मैं हरि रूठ्या कहँ जाना।
राणा भेजा जहर-पिया, मैं अमृत करि पी जाना॥
डबिया में भेजा जो भुजंगम, मैं शालग्राम करि जाना।
मीरा तौ अब प्रेम-दिवानी, मैं साँवलिया वर पाना॥

[१६]

हरि, तुम हरो जन की भीर।
द्रोपदी की लाज राखी, तुम बढ़ायो चीर॥

भक्त-कारन रूप नरहरि, धर्‌यो आप सरीर।
हिरनकस्यप मारि लीन्हो, धर्‌यो नाहिंन धीर॥
बूड़ते गजराज राख्यो, कियो बाहर नीर।
दास मीरा लाल गिरिधर, हरी जन की पीर॥

[१७]

मेरो मन रामहि राम रटै, रे।
राम नाम जपि लीजै प्यारे, कोटिक पाप कटै, रे॥
जनम-जनम के खत जु पुराने, नामहि लेत फटै, रे॥
कनक कटोरे अमरत भरियो, पीवत कौन नटै, रे॥
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर, तन मन ताहि पटै, रे॥

[१८]

सखी, मेरी नींद नसानी, हो।
पिय को पंथ निहारत सिगरी रैन बिहानी, हो॥
सब सखियन मिलि सीख दई, मन एक न मानी, हो।
बिन देखे कल नाहिं परत जिय ऐसी ठानी, हो॥
अंग छीन ब्याकुल भई, मुख पिय पिय बानी, हो।
अंतरवेदन बिरह की, वह पीर न जानी, हो॥
ज्यों चातक घन को रटै, मछरी जिमि पानी, हो।
मीरा ब्याकुल बिरहिनी सुध-बुध बिसरानी, हो॥

सहजोबाई

सन्त चरनदासजी की ये शिष्या थीं। इनका जन्म सं० १८०० में हुआ था। ये अपने गुरु के आश्रम में साधुरूप में रहती थीं और भगवद् भजन तथा निजरचित छन्दों द्वारा भगवद्-गुण-गान किया करती थीं। सहजो प्रकाश नाम की एक पुस्तक प्रकाशित हुई है। जिसमें इनके पद्य हैं।

दोहा

जज्ञ दान तीरथ करै, पूजा भाँति अनेक।
मुक्त न पावै सहजिया, विना भक्ति हर एक ॥ १ ॥

इन्दर की पदवी मिलै, और ब्रह्म की आव।
आगे तौ भी मरन है, सहजो सकल बहाव ॥ २ ॥

एक घड़ी का मोलना, दिन का कहाँ बखान।
सहजो ताहि न खोइये, विना भजन भगवान ॥ ३ ॥

सहजो भव सागर बहै, तिमिर बरस घनघोर।
ता में नाम जहाज है, पार उतारै तोर ॥ ४ ॥

पावक नाम जलाइ है, पाप ताप दुःख द्वन्द।
राम सुमिर सहजो कहै, जो बिसरै सो अन्ध ॥ ५ ॥

सहजो क्रोधी अति बुरो, उलटी समझै बात।
सबही सूँ ऐंठों रहै, करै बचन की घात ॥ ६ ॥

मन मैला तन छीन है, हर सूँ लगै न नेह।
दुखी रहै सहजो कहै, मोह बसै जा देह ॥ ७ ॥

मोहमिरग काया बसै, कैसे उबरै खेत।
जो बोवै सोई चरै, लगै न ही सूँ हेत ॥ ८ ॥

नीच लोभ जा घर बसै, झूँठ कपट सूँ काम।
बौरायौ चहु दिस फिरै, सहजो कारन दाम ॥ ९ ॥

प्रभुताई कूँ चहत हैं, प्रभु को चहै न कोय।
अभिमानी घट नीच है, सहजो ऊँच न होय ॥ १० ।
सहजो तारे सब सुखी, गहैं चन्द और सूर।
साधू चाहै दीनता, चहैं बड़ाई कूर ॥ ११ ।
अभिमानी नाहर बड़ो, भरमत फिरत उजाड़।
सहजो नन्हीं बाकरी, प्यार करै संसार ॥ १२ ॥
सीस कान मुख नासिका, ऊँचे ऊँचे नाँव।
सहजो नीचे कारनै, सब कोइ पूजे पाँव ॥ १३ ॥
नन्हीं चींटी भवन में, जहाँ तहाँ रस लेय।
सहजो कुंजर अति बड़ो, सिर में डारे खेह ॥ १४ ॥
सहजो नन्हा बालका, महल भूप के जाय।
नारी परदा ना करै, गोदहि गोद खेलाय ॥ १५ ।
बारे दीवे चाँदना, बड़ा भये अँधियार।
सहजो तृन हल्का तिरै, डूबै पत्थर भार ॥ १६ ।
भली गरीबी नवनता, सकै नहीं कोउ मार।
सहजो रुई कपास की, काटै ना तरवार ॥ १७

दुष्ट वर्णन

दोहा

दुष्टन की महिमा कहूँ, सुनियो सन्त सुजान।
ताना दै-दै दृढ़ करैं, भक्ति-जोग अरु ज्ञान ॥

चौपाई

धन दुष्टी जो दृढ़ता देई। निन्दा कर पातक हर लेई॥
दुष्टी त्यागी दीखै भारी। समझ सोच 'सहजो' बलिहारी॥
तज दिय साध-संग गुरुचरना। त्यागी भक्ति ध्यान का धरना॥
त्यागी उत्तम रहनी गहनी। त्यागी हरि की लीला कहनी॥
त्यागे बचन बिमल सुखदाई। तजि दिय साँच झूठ लौ लाई॥
जो सतसील छिमा तज दीन्हा। सो साधू माथे धरि लीन्हा॥
तजी दीनता सुबुधि चिताई। सो गरीब साधों ने पाई॥
तजि बैराग परमसन्तोषा। सब बिधि तज्यो रामगति मोषा॥

दोहा

भली चाल दुष्टी तजै, ऐसा त्यागी होय।
बुरी चाल साधू तजै, तजन कहै सब कोय॥

साधु-वर्णन

चौपाई

साध सोई जो काया साधै। तजि आलस औ बाद बिबादै॥
गहै धारना सदगति भारी। तजै बिकलता अस्तुति गारी॥
छिमावन्त धीरज कूँ धारै। पाँचों बस करि मन कूँ मारै॥
त्यागै झूँठ साँच मुख बोलै। चित इस्थिर इत उत ना डोलै॥
तन जगमें मन हरि के पासा। लोक भोग सूँ सदा उदासा॥

जत सत नखसिख सीतलताई। तन मन बचन सदा सुखदाई।
निर्गुन ध्यानी ब्रह्मगियानी। मुख सूँ बोलैं अमृतबानी
समझ एकता भाव न दूजे। जिनके चरन 'सहजिया' पूजे

सच्चिदानन्द

दोहा

नया पुराना होय ना, घुन नहिं लागै जासु।
'सहजो' मारा ना मरै, भय नहिं ब्यापै तासु॥
किरै घटै छीजै नहीं, ताहि न भिजवै नीर।
ना काहू के आसरे, ना काहू के सीर॥
रूप बरन वाके नहीं, 'सहजो' रङ्ग न देह।
मीत इष्ट वाके नहीं, जाँति पाँति नहिं गेह॥
'सहजो' उपजै ना मरै, सद वासी नहिं होय।
रात दिवस तामें नहीं, सीत उष्ण नहिं सोय॥
आग जलाय सकै नहीं, सस्तर सकै न काटि।
धूप सुखाय सकै नहीं, पवन सकै नहिं आटि॥
मात पिता वाके नहीं, नहिं कुटुम्ब को साज।
'सहजो' वाहि न रंकता, ना काहू को राज॥
आदि अन्त ताके नहीं, मध्य नहीं तेहि माहिं॥
वार पार नहिं 'सहजिया', लघू दीघ भी नाहिं॥
परलय में आवै नहीं, उतपति होय न फेर।
ब्रह्म अनादि 'सहजिया,' घने हिराने हेर॥

जाके किरिया करम ना, षट दर्शन को भेस।
गुन औगुन ना 'सहजिया,' ऐसे पुरुष अलेस ॥
रूप नाम गुन सूं रहित, पांच तत्त सूं दूर।
चरनदास गुरु ने कही, 'सहजो' छिमा हजूर ॥
आपा खोये पाइये, और जतन नहिं कोय।
नीर छीर निर्ताय के, 'सहजो' सुरति समोय ॥

राग बिलावल

हरि बिनु तेरो ना हितू, कोऊ या जग माहीं।
अन्त समय तू देखिले, कोई गहै न बाहीं ॥
जम सूं कहा छुटा सकै, कोई संग न होई।
नारी हूँ फटि रहि गई, स्वारथ कूँ रोई ॥
पुत्र कलित्तर कौन के, भाई अरु बन्धा।
सब ही ठोंक जलाइहैं, समझै नहिं अन्धा ॥
महल दरब ह्याँ ही रहैं, पचि-पचि करि जोड़ा।
करहा गज ठाढ़े रहैं, चाकर अरु घोड़ा ॥
पर काजै बहु दुख सहै, हरि-सुमिरन खोया।
'सहजो बाई' जम घिरैं, सिर धुनि-धुनि रोया ॥

राग आसावरी

ज्ञानदृष्टि सूं घट में देखौ, सुरति निरति लौ लावौ ॥
पाँच मारि मन बसि कर अपने, तीनों ताप नसावौ।
संत संतोष गहै दृढ़ सेती, दुर्जन मारि भजावौ ॥

सील छिमा धीरज कूँ धारौ, अनहद बंब गजावौ।
पाप बानिया रहन न दीजै, धरम-बजार लगावौ॥
सुबस बास होवै जब नगरी, बैरी रहै न कोई।
चरनदास गुरु अमल बतायौ, 'सहजौ' संभलो सोई॥

राग परज

तेरी गति किनहुँ न जानी हो।
ब्रह्मा सेस महेसुर थाके, चारो बानी हो॥
बाद करंते सब मत थाके, बुद्धि थकानी हो।
विद्या पढ़ि-पढ़ि पंडित थाके, ब्रह्मगियानी हो॥
सबके परे जुअन मम हारी, थाह न आनी हो।
छान-बीन करि बहुतक थाकी, भई खिसानी हो॥
सुरनर-मुनिजन गनपति थाके, बड़े बिनानी हो।
चरनदास थकी 'सहजोबाई', भई सिरानी हो॥

दयाबाई

ये महात्मा चरनदास की शिष्या थीं। प्रसिद्ध भक्त और कवियित्री सहजोबाई की ये गुरुबहन थीं। मेवाड़ के डेहरा नामक गाँव में इनका जन्म हुआ था। कहा जाता है कि ये चरनदास की जात की थीं, पर इसका कोई प्रमाण हमारे देखने में नहीं आया, इनके गार्हस्थ्य जीवन के विषय में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है। इनकी कविता सरस और सरल होती है, ये अद्वैत मत को मानने-वाली थीं।

दोहा

जो पग धरत सो दृढ़ धरत, पग पाछे नहीं देत ।
अहंकार को मार कर, रामरूप यश लेत ॥१॥

तात मात तुम्हरे गये, तुम भी भये तयार ।
आज काल में तुम चलो, दया होउ हुसियार ॥२॥

बड़ो पेट है काल को, नेक न कहूँ अघाय ।
राजा रानी छत्रपति, सब को लीले जाय ॥३॥

दयाकुँअरि या जगत् में, नहीं आपनो कोय ।
स्वारथबन्दी जीव है, राम नाम चित जोय ॥४॥

जैसो मोती ओसको, तैसो यह संसार ।
बिनसि जाय छिन एक में, दया प्रभू उरधार ॥५॥

विरह व्यथा सो हूँ बिकल, दरसन कारन पीव ।
दया दया की लहर कर, क्यों तलफाओ जीव ॥६॥

प्रेम पंथ को अटपटो, कोई न जानत वीर ।
कै मन जानत आपनो, कै लागी जेहि पीर ॥७॥

त्रिभुवन की सम्पति दया, तृन सम जानत साध ।
हरि रस माते जो रहें, तिनको मतो अगाध ॥८॥

दयाकुँअरि या जगत् में, नहीं रह्यो थिर कोय ।
जैसो बास सराय को, तैसो यह जग होय ॥९॥

प्रिय को रूप अनूप लखि, कोटि भानु उजियार ।
दया सकल दुख मिटि गयो, प्रगट भयो सुख सार ॥ १० ॥
महामोह की नींद में, सोवत सब संसार ।
दया जगी गुरु दया सों, ज्ञान भानु उजियार ॥ ११ ॥

आत्म-ज्ञान

चौपाई

ज्ञान रूप को भयो प्रकाश । भयो अविद्या तम को नाश ॥
सूझ पर्‌यो निज रूप अभेद । सहजै मिट्यो जीव को खेद ॥
जीव ब्रह्म अन्तर नहिं कोय । एकहि रूप सर्व घट सोय ॥
विमल रूप व्यापक सब ठाईं । अरधउरध मधि रहत गुसाईं ॥
जग विवर्तसों न्यारा जान । परमद्वैत रूप निरवान ॥
निराकार निर्गुन निरवासी । आदि निरंजन अज अविनासी ।

भक्ति-शूर

दोहा

जो पग धरत सो दृढ़ धरत, पग पाछे नहिं देत ।
अहंकार कूँ मारि करि, राम रूप जस लेत ॥
सूरा सन्मुख समर में, घायल होत निसंक ।
यों साधू संसार में, सिर पै सहैं कलंक ॥

कायर कंपै देख करि. साधू को संग्राम ।
सीस उतारै भुइँ धरै, तब पावै निज ढाम ॥

विनय

दोहा

किहि विधि रीझत हौ प्रभू, का कहि टेरूँ नाथ ।
मेहर-लहर जब ही करो, तबहीं होउँ सनाथ ॥
कर्म-फाँस छूटै नहीं, थकित भयो बल मोर ।
अब की बारि उबारिलो, ठाकुर बन्दी छोर ॥
कर्म-रूप दरियाव से, लीजै मोहि बचाय ।
चरनकमल तर राखिये, मेहर-जहाज चढ़ाय ॥
निरपच्छी के पच्छ तुम, निराधार आधार ।
मेरे तुम ही नाथ इक, जीवन-प्रान-अधार ॥
काहू बल अप देह को, काहू राजहि मान ।
मोहि भरोसो तेर ही, दीनबन्धु भगवान ॥
नर-देही दीन्हीं जबै, कीन्हों कोटि करार ।
भक्ति कबूली आदि में, जग में भयो लबार ॥
ऐंचा-खैंची करत हैं, अपनी-अपनी ओर ।
अब की बेर उबार लो, त्रिभुवन-बन्दी-छोर ॥
ठग पापी कपटी कुटिल, ये लच्छन मोहि माहिं ।
जैसी तैसी तेरही, अरु काहू को नाहिं ॥

धूप हरै छाया करै, भोजन को फल देत।
सरनाये की करत हैं, सब काहू पर हेत॥
जो नहिं अधम उधारतो, तौ नहिं गहते फेंट।
बिर्द की पैज सम्हारि लो, सकल चूक को मेटि॥
लोहा पारस के निकट, कंचन ही सो होय।
जितना चाहै लै करै, लोहा कहै न कोय॥
और नज़र आवै नहीं, रंक राव का साह।
चीरहटा के पंख ज्यों, थो थो काम देखाह॥
धना जाट ने रेत बई, गोहूँ दियो लुटाय।
मौजें श्री गोपाल की, हरी न खेत समाय॥
पीपा गिरो समुद्र में, डूबन लगो शरीर।
किरपा करि दरसन दियो, मेटी तन की पीर॥
मुगधन कीन्ही मसकरी, सब पुर न्योत बुलाय।
द्वारें जबै कबीर के, बरदी दई डराय॥
भेंटो जब रैदास कूँ, लीन्हो भुजा पसार।
हरि लीला रीझै नहीं, अचरज कहो अपार॥
नरसी महता हेत प्रभु, माढ़ी आय दुकान।
स्यामल सेठ कहाइया, दीनबन्धु भगवान॥

सांई

ये गिरिधर कविराय की स्त्री थीं। ये १४७० ई० के लगभग की हैं ऐसा लोगों का विश्वास है। गिरिधर जी के नाम से मशहूर कुण्डलियाँ दो तरह की पायी जाती हैं। एक तरह की वे हैं जिनमें सांई शब्द है और दूसरी तरह की वे हैं जिनमें साँई शब्द नहीं है। अनुमान है कि साँई शब्दवाली कुण्डलियाँ कविराज जी की नहीं हैं। उसी अनुमान पर साँई की सत्ता है। इनकी कई कुण्डलियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं।

कुण्डलियाँ

[१]

सांई बेटा बाप के बिगरे भयो अकाज।
हरिनाकस्यप कंस को गयउ दुहुन को राज॥
गयउ दुहुन को राज बाप बेटा में बिगरी।
दुश्मन दावागीर हँसे महिमण्डल नगरी॥
कह गिरधर कविराय युगन याही चलि आई।
पिता पुत्र के बैर नफ़ा कहु कौने पाई॥

[२]

सांई बैर न कीजिये गुरु पण्डित कवि यार।
बेटा बनिता पौरिया यज्ञ करावन हार॥
यज्ञ करावन हार राजमन्त्री जो होई।
विप्र परोसी वैद्य आप को तपै रसोई॥
कह गिरधर कविराय युगन से यह चलि आई।
इन तेरह सों तरह दिये बनि आवे सांई॥

[३]

सांई ऐसे पुत्र ते बाँझ रहे बरु नारि।
बिगरी बेटे बाप से जाइ रहे ससुरारि॥

जाइ रहे ससुरारि नारि के हाथ बिकाने।
कुल के धर्म नसाय और परिवार नसाने॥
कह गिरधर कविराय मातु झंखे वहि ठाईं।
असि पुत्रिन नहिं होय बांझ रहतिउँ बस सांईं।

[४]

सांईं तहाँ न जाइए जहाँ न आपु सुहाय।
वरन विषै जाने नहीं, गदहा दाखै खाय॥
गदहा दाखै खाय गऊ पर दृष्टि लगावै।
सभा बैठि मुसक्याय यही सब नृप को भावै॥
कह गिरधर कविराय सुनो रे मेरे भाई।
तहाँ न करिये बास तुरत उठि अइये सांईं॥

[५]

सांईं अपने चित्त की भूलि न कहिए कोय।
तब लग मन में राखिये जब लगकाज न होय॥
जब लग काज न होय भूल कबहूँ नहिं कहिये।
दुर्जन तातो होय आप सीरे ह्वै रहिये॥
कह गिरधर कविराय बात चतुरन के तांईं।
करतूती कहि देत आप कहिये नहिं सांईं॥

[६]

सांई सुआ प्रवीन गति वाणी वदन विचित्त ।
रूपवंत गुण आगरो राम नाम सों चित्त ॥
रामनाम सों चित्त और देवन अनुराग्यो ।
जहाँ जहाँ तुव गयो तहाँ तहँ नीको लाग्यो ॥
कह गिरधर कविराय सुआ चूक्यो चतुराई ।
वृथा कियो विश्वास सेय सेमर को सांई ॥

[७]

सांई लोक सुधार दे रे मन होय खमोश ।
खुद ही भीतर गुम्म हो खुद की रहै न होश ॥
खुद की रहै न होश तभी तुम होओ कामिल ।
अथवा न्यारे रहो या रहो सब में शामिल ॥
कह गिरधर कविराय फटकरी लगे न पाई ।
बिन मँजीठ रंगरेज बिना दिलरँगो न सांई ॥

[८]

सांई लोक पुकार दे रे मन होय पलंग ।
अमल फकीरा का चढ़े क्या तिस आगे भंग ॥
क्या तिस आगे भंग वारुणी चरस धतूरा ।
नशा करै सब रद्द फरत जब होवै पूरा ॥

कह गिरधर कविराय किसी को तू न बुलाई ।
तुझे न रोके कोय विचर निर्भय हो सांई ॥

[९]

सांई लोक पुकार दे रे मन हो दरवेश ।
काल हाल को डाल के खुद में कर परवेश ॥
खुद में कर परवेश शरहदा कड़ो न पल्ला ।
सब दुनियाँ से हटो बनो बस निर्भय झल्ला ॥
कह गिरधर कविराय जान ले अपने ताई ।
जिसे जानकर और जानना रहै न साई ॥

राजमाता रघुवंशकुमारी

दियरा राज्य की महारानी और राजमाता हैं। आपका ब्याह दियरा के राजा रुद्र प्रताप शाही से हुआ था। वहाँ के वर्तमान राजा आपके पुत्र हैं। आपका जन्म १९२५ सम्वत् में हुआ था। भगवानपुर के राजा की आप कन्या हैं। आप गुणवती और विदुषी हैं। शिल्पकला में इतनी प्रवीण हैं कि प्रदर्शनियों से आप पुरस्कृत हुई हैं। आपकी बनाई ये पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

(१) भामिनी विलास। (२) वनिता बुद्धिविलास। (३) सूपशास्त्र। आपकी कविताओं की बानगी देखिए।

[१]

फिरै चारिहु धाम करै व्रत कोटिकहा बहु तीरथ तोय पिये तें ।
जप होम करै अनगंत कछू न सरै नित गंग नहान किये तें ॥
कहा धेनु को दान सहस्रन वार तुलागज हेम करीर दिये तें ।
रघुवंश कुमारी वृथा सब हैं जब लौं पति सेवे न नारि हिये तें ॥

[२]

छायेगी जो ज्ञान-घटा हिय में विचार सत्य,
मारुत वहाय स्वच्छ बूँदे झरि लायगी ।
जायगी भली न मति आपनो पराया सब,
रहैगी न देह यह नीके दरसायगी ॥
करैगी कलेस जोवै लहैगी अमोल मणि,
जीव ब्रह्म बीच कछु भेद नहिं आयगी ॥
खिलैगी सनेह कली धरैगी जो ध्यान अली ।
बाकी झाँकी इसके खुले ही रहि जायगी ॥

[३]

जेहि केवल संकर सुद्ध हिये धरि ध्यान सदहिं जपै जुगनाम
जेहि के बल गीध अजामिल हूँ सेवरी अति नीच गई सुरधाम
जेहि के बल देह न गेह कछू बसुधा बस कीनौ सबै सुरकाम
धनु बान लिये तुम आठहु जाम अहो श्रीराम बसो उर धाम

[४]

सीतल मन्द सुगन्ध समीर लगे जपि सज्जन की प्रियबानी ।
धूलि रहे बन बाग समूह लहैं जिमि कीर्ति गुणाकर ज्ञानी ॥
नीक-नवीन सुपल्लव सोह बढ़े जिमि प्रीति वे स्वारथ जानी ।
गान करै कलकीर चकोर पढ़ैं जिमि विप्र सुमङ्गल बानी ॥

[५]

कहत पुकार बेइलिया हे ऋतुराज ।
न्याय दृष्टि से देखहु विपिन समाज ॥
सोना सम्पति काज त्यागि सब साज ।
भये उदासी बिरव बिसरी लाज ॥
ध्यान करहु इत अब सुधि कस नहिं लेत ।
तीछन बहति बयरिया करत अचेत ॥

[६]

पग दावे तें जीवन मुक्ति लही ।
विष्णु पदी सम पतिपद पंकज छुवत परम पद होवे सही ।
निरिखि निरखि मुख अति सुख पावति प्रेम समुद्र के धार बही ।
रिद्धि सिद्धि सकल सुख देवैं सो लक्ष्मी पद हरि के गही ।
जहँ पति प्रीति तहाँ सुख सरबस यही बात स्तुति साँच कही ।

[७]

नील कंठ गोरे अंग सोहत विधुवाल भाल हर हर गङ्गा ।
तीन नैन अरुन कमल विहंसन रद विद्रुम हर हर गङ्गा ॥
लिपटे अहि उर विशाल मुंड काल धारी हर हर गङ्गा ।
पहिने वहि नाग छाल ओढ़े मृग चर्म हर हर गङ्गा ॥
जोगी वर ज्ञान माल बैठे कमलासन हर हर गङ्गा ।
वाम भाग पारवती दाहिने वर बदन हर हर गङ्गा ॥
गोदी गज वदन लाल किलकैं हँसि हेरि हर हर गङ्गा ।
रिद्धि सिद्धि पुत्र सहित बाढ़े सुख सम्पति हर हर गङ्गा ॥
विनती कर जोरि नाथ दीजै मोहि भक्ति मुक्ति हर हर गङ्गा ।

[८]

विमल किरतिया तोहरी कृश्न जी,
फिरी थी उघारी की वाह वा ।
चन्द्रिनि होइ जगने में पहुँची,
सुरपति कीन बड़ाई कि वाह वा ॥
भक्ति होइ संतन में पहुँची,
संतों ने कीन बड़ाई कि वाह वा ।
बुद्धि होइ पंडितन में पहुँची,

कविता होइ कविन में पहुँची,
    कवियों ने कीन बड़ाई कि वाह वा।
दया होइ परजन में पहुँची,
    परजों ने कीन बड़ाई कि वाह वा॥
यकमति होइ भाइन में पहुँची,
    भाइयों ने कीन बड़ाई कि वाह वा।
क्षमा होई ब्राह्मन में पहुँची,
    ब्राह्मनों ने कीन बड़ाई कि वाह वा॥
सत्य सुगन्ध समीर ले पहुँची,
    सब जग होइ बड़ाई कि वाह वा॥

सुभद्रा देवी चौहान

इनका जन्म संवत् १९६१ वि० में हुआ था। बाल्यावस्था से ही काव्य में इनकी विशेष रुचि थी। १९७६ संवत् में इनका ब्याह हुआ। ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान बी० ए० एल-एल० बी० सा पति पाने से कविता का इन्हें और सुयोग मिला। इनकी कविता में सरलता पूर्ण गम्भीरता होती है, जो कविता की जान है। नीचे इनकी सुन्दर और भावपूर्ण कविताएँ पढ़िए।

झाँसी की रानी

सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नयी जवानी थी।
गुमी हुई आजादी की कीमत सब ने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सब ने मन में ठानी थी।
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी,
बुन्देले हर बोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी॥ १॥

कानपूर के नाना की मुँहबोली बहिन छबीली थी,
लक्ष्मीबाई नाम पिता की वह सन्तान अकेली थी।
नाना के संङ्ग पढ़ती थी वह नाना के संग खेली थी,
बरछी ढाल कृपाण कटारी उसकी यही सहेली थी।
वीरशिवाजी की गाथाएँ उसको याद जबानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी॥ २॥

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयं वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार।
नकली युद्ध व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना दुर्ग तोड़ना ये थे उसके प्रिय खिलवार।
महाराष्ट्र कुलदेवी उसकी भी आराध्य भवानी थी,

बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥ ३ ॥

हुई वीरता की वैभव के साथ सगाई झाँसी में।
ब्याह हुआ रानी बन आर्यी लक्ष्मीबाई झाँसी में।
राजमहल में बजी बधाई खुशियाँ छाई झाँसी में,
सुभट बुन्देलों की विरुदावलि सी वह आई झाँसी में।
चित्रा ने अर्जुन को पाया शिव से मिली भवानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहनी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥ ४ ॥

उदित हुआ सौभाग्य मुदित महलों में उजियाली छाई,
किन्तु कालगति चुपके चुपके काली घटा घेर लाई।
तीर चलाने वाले कर में उसे चूड़ियाँ कब भाई,
रानी विधवा हुई हाय विधि को भी दया नहीं आई।
निःसन्तान मरे राजा जी रानी शोक समानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥ ५ ॥

बुझा दीप झांसी का तब डलहौजी मन में हरषाया,
राज्य हड़प करने की उसने यह अवसर अच्छा पाया।
फौरन फौजें भेज दुर्ग पर अपना झंडा फहराया,
लावारिस का वारिस बन कर ब्रिटिशराज्य झाँसी आया।

अश्रुपूर्ण रानी ने देखा झाँसी हुई बिरानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥६॥
अनुपम विनय नहीं सुनता है, विकट शासनों की माया,
व्यापारी बन दया चाहता था जब यह भारत आया।
डलहौजी ने पैर पसारे अब तो पलट गई काया,
राजाओं नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया।
रानी दासी बनी, बनी यह दासी अब महरानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥७॥
छिनी राजधानी देहली की लखनऊ छीना बातों बात,
कैद पेशवा था बिठूर में हुआ नागपुर का भी घात।
उदीपुर तंजौर सितारा करनाटक की कौन बिसात,
जब कि सिंध पञ्जाब ब्रह्म पर अभी हुआ था वज्रनिपात।
बंगाले मद्रास आदि की भी वही कहानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥८॥
रानी रोई रनिवासों में बेगम गम से थीं बेजार,
उनके गहने कपड़े बिकते थे कलकत्ते के बाजार।
सरे आम नीलाम छापते थे अँग्रेज़ों के अखबार,
नागपूर के जेवर ले लो लखनऊ के लो नौ लखहार।

यों परदे की इज्जत परदेशी के हाथ बिकानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥९॥
कुटियों में थी विषय वेदना महलों में आहत अपमान,
वीर सैनिकों के मन में था अपने पुरखों का अभिमान।
नाना धुन्दूपन्त पेशवा जुटा रहा था सब सामान,
बहिन छबिली ने रणचंडी का कर दिया प्रकट आह्वान।
हुआ यज्ञ प्रारम्भ उन्हें तो सोई ज्योति जगानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१०॥
महलों ने दी आग झोपड़ी ने ज्वाला सुलगाई थी,
यह स्वतन्त्रता की चिनगारी अन्तरतम से आयी थी।
झाँसी चेती दिल्ली चेती लखनऊ लपटें छाई थीं,
मेरठ कानपूर पटना ने भारी धूम मचाई थी।
जबलपूर कोल्हापुर में भी कुछ हलचल उकसानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥११॥
इस स्वतन्त्रता महायज्ञ में कई वीरवर आये काम,
नाना धुन्दूपन्त तांतिया चतुर अजीमुल्ला सरनाम।
अहमदशाह मौलवी, ठाकुर कुँवरसिंह सैनिक अभिराम,
भारत के इतिहास गगन में अमर रहेंगे जिनके नाम ॥

लेकिन आज जुर्म कहलाती उनकी जो कुर्बानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१२॥

इनकी गाथा छोड़ चले हम झाँसी के मैदानों में,
जहाँ खड़ी है लक्ष्मीबाई मर्द बनी मर्दानों में।
लेफ्टिनेन्ट वौकर आ पहुँचा आगे बढ़ा जवानों में,
रानी ने तलवार खींच ली हुआ द्वन्द्व असमानों में।
जख्मी होकर वौकर भागा उसे अजब हैरानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१३॥

रानी बढ़ी कालपी आई कर सौ मील निरन्तर पार,
घोड़ा थककर गिरा भूमि पर गया स्वर्ग तत्काल सिधार।
यमुना तट पर अँग्रेज़ों ने फिर खाई रानी से हार,
विजयी रानी आगे चल दी किया ग्वालियर पर अधिकार।
अँग्रेज़ों के मित्र सेंधिया ने छोड़ी रजधानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१४॥

विजय मिली, पर अँग्रेज़ों की फिर सेना घिर आई थी,
अबके जनरल स्मिथ सम्मुख था उसने मुँहकी खाई थी।
काना और मंदिरा सखियाँ रानी के संग आई थीं,

युद्धक्षेत्र में उन दोनों ने भारी मार मचाई थी।
पर पीछे ह्यूरोज आगया हाय, घिरी अब रानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१५॥

तो भी रानी मार काट कर चलती बनी सैन्य के पार,
किन्तु सामने नाला आया, था यह संकट विषम अपार।
घोड़ा अड़ा, नया घोड़ा था इतने में आगए सवार,
रानी एक शत्रु बहुतेरे होने लगे वार पर वार।
घायल होकर गिरी सिंहनी उसे वीर गति पानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१६॥

रानी गई सिधार, चिता अब उसकी दिव्य सवारी थी,
मिला तेज से तेज, तेज की वह सच्ची अधिकारी थी।
अभी उम्र कुल तेइस की थी, मनुज नहीं अवतारी थी,
हमको जीवित करने आई बन स्वतन्त्रता नारी थी।
दिखा गई पथ सिखा गई हमको जो सीख सिखानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ॥१७॥

जाओ रानी याद रखेंगे ये कृतज्ञ भारतवासी,
यह तेरा बलिदान जगावेगा स्वतन्त्रता अविनाशी।
होवें चुप इतिहास, रचो सचाई को चाहे फाँसी,

हो मदमाती विजय मिटादे गोलों से चाहे झाँसी।
तेरा स्मारक तूही होगी तू खुद अमिट निशानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी॥ १८॥

मातृमन्दिर में

वीणा बजसी पड़ी, खुल गये नेत्र और कुछ आया ध्यान।
मुड़ने की थी देर, दिख पड़ा उत्सव का प्यारा सामान॥
जिसको तुतला तुतला करके शुरू किया था पहली बार।
जिस प्यारी भाषा में हमको प्राप्त हुआ है माँ का प्यार॥
उस हिन्दू जन की गरीबनी हिन्दी, प्यारी हिन्दी का।
प्यारे भारतवर्ष कृष्ण की उस प्यारी कालिन्दी का॥
है उसका ही समारोह यह उसका ही उत्सव प्यारा।
मैं आश्चर्य भरी आँखों से देख रही हूँ यह सारा॥
जिस प्रकार कंगाल बालिका अपनी माँ धनहीना को।
टुकड़ों की मुहताज आज तक दुखिनी को उस दीना को॥
सुन्दर वस्त्राभूषण सज्जित देख चकित हो जाती है।
सच है या केवल सपना है, कहती है, रुक जाती है॥
पर सुन्दर लगती है, इच्छा यह होती है कर ले प्यार।
प्यारे चरणों पर बलि जाये कर ले मन भर के मनुहार॥

इच्छा प्रबल हुई माता के पास दौड़ कर जाती है।
वस्त्रों को सँवारती उसको आभूषण पहनाती है॥
उसी भाँति आश्चर्य मोदमय आज मुझे झिझकाता है।
मन में उमड़ा हुआ भाव बस मुँह तक आ रुक जाता है॥

प्रेमोन्मत्ता होकर तेरे पास दौड़ आती हूँ मैं।
तुझे सजाने या सँवारने में ही सुख पाती हूँ मैं॥
तेरी इस महानता में क्या होगा मूल्य सजाने का।
तेरी भव्य मूर्ति को नक़ली आभूषण पहनाने का॥

किन्तु क्या हुआ माता ! मैं भी तो हूँ तेरी ही सन्तान।
इसमें ही सन्तोष मुझे है इसमें ही आनन्द महान॥
मुझ सी एक एक की बन तू तीस कोटि की आज हुई।
हुई महान सभी भाषाओं की तू ही सिरताज हुई॥
मेरे लिए बड़े गौरव की और गर्व की है यह बात।
तेरे द्वारा ही होवेगा भारत में स्वातन्त्र्य-प्रभात॥
असहयोग पर मर मिट जाना यह जीवन तेरा होगा।
हम होंगे स्वाधीन विश्व का वैभव धन तेरा होगा॥

जगती के वीरों द्वारा शुभ पद वन्दन तेरा होगा।
देवों के पुष्पों द्वारा अब तेरा अभिनन्दन होगा॥
तू होगी आधार देश की पार्लमेन्ट बन जाने में।
तू होगी सुख सार देश के उजड़े क्षेत्र बसाने में।

तू होगी व्यवहार देश के बिछुड़े हृदय मिलाने में।
तू होगी अधिकार देश भर को स्वातन्त्र्य दिलाने में॥

कलह-कारण

कड़ी आराधना करके बुलाया था उन्हें मैंने।
पदों को पूजने के ही लिये थी साधना मेरी॥
तपस्या नेम व्रत करके रिझाया था उन्हें मैंने।
पधारे देव पूरी हो गयी आराधना मेरी॥
उन्हें सहसा निहारा सामने सङ्कोच हो आया।
मुँदी आँखें सहज ही लाज से नीचे झुकी थी मैं॥
कहूँ क्या प्राणधन से यह हृदय में सोच हो आया।
वही कुछ बोल दें पहले, प्रतीक्षा में रुकी थी मैं॥
अचानक ध्यान पूजा का हुआ झट आँख जो खोली।
नहीं देखा उन्हें, बस सामने सूनी कुटी देखी॥
हृदयधन चल दिये, मैं लाज से उनसे नहीं बोली।
गया सर्वस्व अपने आपको दूनी लुटी देखी॥

मेरा नया बचपन

बार बार आती है मुझको, मधुर याद बचपन तेरी।
गया, ले गया तू जीवन की सब से मस्त खुशी मेरी॥
चिन्ता रहित खेलना-खाना, वह फिरना निर्भय स्वच्छन्द।
कैसे भूला जा सकता है, बचपन का अतुलित आनन्द॥

ऊँच नीच का ज्ञान नहीं था, छुआछूत किसने जानी ?
बनी हुई थी, अहा ! झोपड़ी और चीथड़ों में रानी ॥
किये दूध के कुल्ले मैंने, चूस अँगूठा सुधा पिया ।
किलकारी-कल्लोल मचा कर, सूना घर आबाद किया ॥
रोना और मचल जाना भी, क्या आनन्द दिखाते थे ।
बड़े बड़े मोती से आँसू, जयमाला पहनाते थे ॥
मैं रोयी, माँ काम छोड़ कर आयी, मुझको उठा लिया ।
झाड़ पोंछ कर चूम चूम, गीले गालों को सुखा दिया ॥
दादा ने चन्दा दिखलाया, नेत्र नीर द्रुत चमक उठे ।
धुली हुई, मुस्कान देखकर, सब के चेहरे चमक उठे ॥
वह सुख का साम्राज्य छोड़कर, मैं मतवाली बड़ी हुई ।
लुटी हुई, कुछ ठगी हुई सी दौड़ द्वार पर खड़ी हुई ॥
लाज भरी आँखें थीं मेरी मन में उमँग रँगीली थी ।
तान रसीली थी कानों में, चञ्चल छैल छबीली थी ॥
दिल में एक चुभन सी थी, यह दुनिया सब अलबेली थी ।
मन में एक पहेली थी, मैं सब के बीच अकेली थी ॥
मिला, खोजती थी जिसको, हे बचपन ठगा दिया तूने ।
अरे जवानी के फन्दे में, मुझको फँसा दिया तूने ॥
सब गलियाँ उसकी भी देखीं, उसकी खुशियाँ न्यारी हैं ।
प्यारी प्रीतम की रँग रलियों की भी स्मृतियाँ प्यारी हैं ॥

माना मैंने युवाकाल का जीवन खूब निराला था।
आकांक्षा, पुरुषार्थ, ज्ञान का उदय मोहनेवाला था॥
किन्तु यहाँ झंझट है भारी युद्ध-क्षेत्र संसार बना।
चिन्ता के चक्कर में पड़कर, जीवन भी है भार बना॥

आजा, बचपन! एकबार फिर देदे अपनी निर्मल शान्ति।
व्याकुल व्यथा मिटानेवाला वह अपनी प्राकृत विश्रान्ति॥
वह भोली सी मधुर सरलता वह प्यारा जीवन निष्पाप।
क्या फिर आकर मिटा सकेगा, तू मेरे मन का सन्ताप॥

मैं बचपन को बुला रही थी, बोल उठी बिटिया मेरी।
नन्दनबन-सी फूल उठी, यह छोटी सी कुटिया मेरी॥
"मा ओ" कहकर बुला रही थी, मिट्टी खाकर आई थी।
कुछ मुँह में कुछ लिए हाथ में, मुझे खिलाने आई थी॥
पुलक रहे थे अंग दृगों में, कौतूहल था छलक रहा।
मुँह पर थी आह्लाद लालियाँ विजय-गर्व था झलक रहा।
मैंने पूछा "यह का लायी?" बोल उठी वह 'माँ काओ'।
हुआ प्रफुल्लित हृदय खुशी से, मैंने कहा "तुम्हीं खाओ॥"

पाया मैंने बचपन फिर से, बचपन बेटी बन आया।
उसकी मंजुल मूर्ति देखकर, मुझमें नव जीवन आया॥
मैं भी उसके साथ खेलती, गाती हूँ, तुतलाती हूँ।
मिलकर उसके साथ स्वयं भी, मैं बच्ची बन जाती हूँ॥

जिसे खोजती थी वर्षों से उसको अब जाकर पाया।
भाग गया था मुझे छोड़ कर, वह बचपन फिर से आया॥

मेरी कविता

मुझे कहा कविता लिखने को, लिखने बैठी मैं तत्काल।
पहले लिखा 'जालियाँ वाला' कहा कि 'बस होगये निहाल॥'
तुम्हें और कुछ नहीं सूझता ले देकर वह खूनी बाग।
रोने से अब क्या होता है, धुल न सकेगा उसका दाग॥

भूल उसे चल हँसो मस्त हो, मैंने कहा धरो कुछ धीर।
तुम को हँसते देख कहीं फिर, फ़ायर करे न डायर वीर॥
कहा "न मैं कुछ लिखने दूँगा, मुझे चाहिये प्रेम कथा।"
मैंने कहा—"नबेली है वह, रम्यवदन है चन्द्र यथा॥"

अहा! मग्न हो उछल पड़े वे, मैंने कहा—'सुनो चुपचाप।'
बड़ी बड़ी सी भोली आँखें केशपाश ज्यों काले साँप॥
भोली भोली आँखें देखो, उसे नहीं तुम रुलवाना।
उसके मुँह से प्रेम भरी कुछ मीठी बतियाँ कहलाना॥

हाँ, वह रोती नहीं कभी भी और नहीं कुछ कहती है।
शून्य दृष्टि से देखा करती, खिन्नमना सी रहती है॥
करके याद पुराने सुख को, कभी चौंक सी पड़ती है।
भय से कभी काँप जाती है, कभी क्रोध में भरती है॥

कभी किसी की ओर देखती नहीं दिखाई देती है।
हँसती नहीं किन्तु चुपके से कभी कभी रो लेती है ॥
ताजे हल्दी के रँग से कुछ पीली उसकी सारी है।
लाल लाल से धब्बे हैं कुछ, अथवा लाल किनारी है ॥
उसका छोर लाल ! संभव है, हो वह खूनी रँग से लाल।
है सिंदूर बिंद के सज्जित अब भी कुछ कुछ उसका भाल ॥
अबला है, उसके पैरों में बनी महावर की लाली।
हाथों में मेहदी की लाली, वह दुखिया भोली भाली ॥

उसी बाग की ओर शाम को जाती हुई दिखाती है।
प्रातःकाल सूर्योदय से पहले ही फिर आती है ॥
लोग उसे पागल कहते हैं, देखो तुम न भूल जाना।
तुम भी उसे न पागल कहना, मुझे क्लेश मत पहुँचाना ॥
उसे लौटती समय देखना रम्य बदन पीला पीला।
साड़ी का वह लाल छोर भी रहता है बिलकुल गीला ॥
डायन भी कहते हैं उसको कोई कोई हत्यारे।
उसे देखना किन्तु न ऐसी गलती तुम करना प्यारे ॥

बाईं ओर हृदय में धड़कन कुछ उसके दिखलाती है।
वह भी प्रतिदिन क्रम क्रम से कुछ धीमी होती जाती है ॥
किसी रोज संभव है उसकी धड़कन बिलकुल मिट जावे।
उसकी भोली भाली आँखें हाय ! सदा को मुँद जावें ॥

उसकी ऐसी दशा देखना आँसू चार बहा देना ।
उसके दुःख में दुखिया बनके तुम भी दुःख मना लेना ॥

राखी

भैया कृष्ण ! भेजती हूँ मैं राखी अपनी यह लो आज ।
कई बार जिसको भेजा है सजा सजाकर नूतन साज ॥
लो आओ, भुजदण्ड उठाओ, इस राखी में बँध जाओ ।
भरत भूमि की रजभूमी को एक बार फिर दिखलाओ ॥

वीर चरित्र राजपूतों का पढ़ती हूँ मैं राजस्थान ।
पढ़ते-पढ़ते आँखों में छा जाता राखी का आख्यान ॥
मैंने पढ़ा शत्रुओं को भी जब जब राखी भिजवाई ।
रक्षा करने दौड़ पड़ा वह राखीबंद शत्रु-भाई ॥

किन्तु देखना है यह मेरी राखी क्या दिखलाती है ।
क्या निस्तेज कलाई ही पर बँध कर वह रह जाती है ॥
देखो भैया भेज रही हूँ तुमको—तुमको राखी आज ।
साखी राजस्थान बनाकर रख लेना राखी की लाज ॥

हाथ काँपता, हृदय धड़कता, है मेरी भारी आवाज़ ।
अब भी चौंकता है जलियाँवाला का वह गोलन्दाज़ ॥
यम की सूरत उन पतितों का पाप भूल जाऊँ कैसे ।
अंकित आज हृदय में है फिर मन को समझाऊँ कैसे ॥

बहिनें कई बिलखती हैं हा ! उनकी सिसक न मिट पाई ।
लाज गँवाई गाली पाई तिसपर धमकी भी खाई ॥
डर है कहीं मार्शल्ला का पड़ जावे फिर से घेरा ।
ऐसे समय द्रौपदी जैसा कृष्ण सहारा है तेरा ॥
बोलो, सोच समझकर बोलो क्या राखी बँधवाओगे ?
भीड़ पड़ेगी, रक्षा करने क्या तुम दौड़े आओगे ?
यदि हाँ तो यह लो, इस मेरी राखी को स्वीकार करो ।
आकर भैया बहिन 'सुभद्रा' के कष्टों का भार हरो ॥

तोरन देवी लली

आपका जन्म कान्यकुब्ज ब्राह्मण कुल में हुआ है। आपके पिता ने घर पर ही अपनी पुत्री 'लली' को शिक्षा दी। इनके मामा भी अच्छे कवि थे। इन्हीं शिक्षितों के सुयोग से तोरन देवी की प्रतिभा विकसित हुई और वे काव्य-क्षेत्र में पदार्पण कर सकीं। इनका ब्याह रायबरेली के प्रतिष्ठित शुक्ल कुल में हुआ है। इनके विचार और काव्य शक्ति की नीचे लिखी कविताओं को देखकर परिचय प्राप्त कीजिए।

प्रार्थना

इक नक्षत्र ज्योतिमय लखकर साहस का संचार हुआ।
चल निकले हम ध्येयप्राप्ति को देख चकित संसार हुआ॥
किन्तु छिपाया उसे मेघ ने तम का विकट प्रसार हुआ।
साथी कब रुक गये सरलपथ बाधापूर्ण अपार हुआ॥
पथ के काँटे बने पुष्पवत् प्रभुवर दया दिखा देना।
मुझ अनजान पथिक को उनके चरणों तक पहुँचा देना॥१॥

जय स्वदेश

जय जय भारत जय जय स्वदेश—
जय शोभित सुन्दर तिलक भाल,
अतिभव्यमूर्ति लोचन विशाल।
अतुलित बलधारी अतिदयाल,
जय जगत-शिरोमणि वीर वेष॥ १ ॥
पूरित सुन्दर षड्ऋतु अनूप,
रक्षक पयोधि हिय शैल-भूप।
जय सत्य न्याय अरु धर्मरूप,
जय तीस कोटि संतति विशेष॥ २ ॥
शुभ पावन प्रिय अनुरक्ति देत,
निज भक्त जन को भक्ति देत।

रणवीर भुज को शक्ति देत,
प्रिय भारत तव महिमा अशेष ॥ ३ ॥
जय जय भारत जय जय स्वदेश—

मातृभूमि का ध्यान

बन्धु क्षणमात्र न भूलो मातृभूमि का ध्यान ।
जन्म हुआ जिस सुखद भूमि पर मिला खान अरु पान ॥
अन्त समय जिसमें मिल जाना सहित मान सम्मान ।
सर्व प्रशंसित भारत भू यह करती सब कल्याण ॥
जिससे बढ़कर नहीं दिखाती किसी देश की शान ।
कालचक्र के कुटिल फेर से आई विपद् महान ॥
सब को भोजन पहुँचा कर भी मरते दीन किसान ।
जागो मित्र समय थोड़ा है अब न बनो अज्ञान ॥
जिसके हित पंजाबसुतों ने दिया रक्त का दान ।
जननी जन्मभूमि का अब तुम शीघ्र करो उत्थान ॥
अन्त समय तक नहीं भूलना एक आत्म-अभिमान ।

जातीयता

है वह सुन्दर शक्ति विजय दिखलानेवाली,
छिपी हुई वह प्रीति सदा अपनानेवाली ॥
है वह अनुपम नीति समय पर उगनेवाली ।
जीव मात्र में निज प्रभाव दरसानेवाली ॥

जो कायरता को दूर कर सजीवता का ज्ञान दे।
है वह बन्धन जातीयता सत्यप्रेम में बाँध दे॥

उसका मधुर विकाश प्रथम अपने हित होता,
बढ़कर फिर परिवार नेह बन्धन है होता।
वही जाति हित वा स्वदेश हित हो जाता है,
जातीयता का तभी वह निज पाता है॥
इसके आगे युक्त हो धान्य धरा धन धाम से।
कहलाता फिर प्रेम वह विश्वप्रेम के नाम से॥

जातीयता के भाव उदय जिनमें होते हैं,
निर्भयता के उच्च उपासक वे होते हैं।
विद्या बुद्धि विचार त्याग उनके गुण होते,
शारीरिक सुख हेत नहीं विचलित वे होते॥
हृदय काँप उठता अहो जिस भीषण अत्याचार से।
वे उसे मिटाने के लिए उठते हैं सुविचार से॥

उसका केवल लक्ष्य यही होता तन मन से,
हो परिपूर्ण स्वदेश विविध गुण अरु धन से।
वे अपने को भूल यही प्रण कर लेते हैं,
कभी कभी निज प्राण देशहित बलि देते हैं॥
जिनके सुमिरन-मात्र से होता हृदय पवित्र है।
उनके हृदयों में खिचा जातीयता का चित्र है॥

अत्याचार कुरीति मिटाकर दिखलावेगा,
जीवन का शुभलक्ष्य वीर वह सिखलावेगा।
जातीयता का भक्त हुआ जो भू पर आकर,
माता का सत्पुत्र जगत् में वह कहला कर ॥
ऊँचे भावों से भरी 'लली' देश की भक्ति है।
भुवन-विजयनी हो सदा जातीयता वह शक्ति है ॥

खूब हुआ

खूब हुआ करुणानिधि हम पर, इतना अत्याचार हुआ।
जिस जीवन के श्रेष्ठ लक्ष्य का कुछ तो हमें विचार हुआ ॥
मिलता जाता अन्न पेट भर खाने और खिलाने को।
मिलते वस्त्र यथारुचि अपना फैसन नित्य बनाने को ॥
बहती दूध दही की धारा सुन्दर स्वास्थ्य बढ़ाने को।
माता के चरणों पर मिलते पुष्प पवित्र चढ़ाने को ॥
तो किस भाँति ज्ञान यह होगा कितना विकट प्रहार हुआ।
इस जीवन के श्रेष्ठ लक्ष्य का कुछ तो हमें विचार हुआ ॥
मिल जाती शिक्षा स्वदेश को शिक्षित हो जाती सन्तान।
व्यक्ति प्रत्येक समझता होता जीवन का उद्देश्य महान ॥
रहती आज एकता हम में होता लाभ हानि का ज्ञान।
देश विदेशों में भी होता भारत का समान सम्मान ॥

तो संसार न कह सकता था भारत निरा गवाँर हुआ।
इस जीवन के श्रेष्ठ लक्ष्य का कुछ तो हमें विचार हुआ॥
अस्त्र शस्त्र छिन गये हाथ से छिने मनुष्योचित अधिकार।
थकी लेखनी बाद हुआ मुँह आश्चर्य यह कैसा व्यवहार॥

\+ \+ \+

तब कह उठा प्रत्येक हृदय हा! कितना अत्याचार हुआ।
इस जीवन के श्रेष्ठ लक्ष्य का कुछ तो हमें विचार हुआ॥
कर्मवीर गाँधी से होंगे भारत के पथ-दर्शक आज।
कौन जानता है चरखा ही रख लेगा दृढ़व्रत की लाज॥
आई स्वयं आत्म-निर्भरता देश-भक्ति का हुआ विकाश।
ज्ञान हुआ अपने गौरव का जगी पुनर्जीवन की आश॥
खूब हुआ उन्माद झेल कर ह्रास नहीं उद्धार हुआ।
इस जीवन के श्रेष्ठ लक्ष्य का कुछ तो हमें विचार हुआ॥

विजय दशमी

प्यारी विश्वविजयिनी आओ।
यही समय था जब रघुपति ने किया दुष्ट संहार।
विजयी हुए असुर रावण पर सुखी हुआ संसार॥
हृदय से जय जयकार सुनाओ,
प्यारी विश्वविजयिनी आओ।

बीत गये दिन बहुत किन्तु नित नव आशा की तार
रखने को अस्तित्व हमारा यही श्रेष्ठ व्योहार।
तुम्ही अब विजयपंथ दिखलाओ,
प्यारी विश्वविजयिनी आओ।
चौदह भुवन व्याकुल जिसके और दिशा है चार
वही जगत् जननी सीता की ओर न सका निहार।
सती का सत योंही चमकाओ,
प्यारी विश्वविजयिनी आओ।
हो सुख से परिपूर्ण जगत् यह खुले शान्ति का द्वार
लाली हिन्द में विजय पताका फहरावे इक बार
नाथ वही दिन फिर दिखलाओ,
प्यारी विश्वविजयिनी आओ।

वीरबिदा

अतिशय प्रियरण कुशल वीर, आज बिदा हम देते हैं
जाओ प्रिय उस घोर सभा में बन कठोर कह देते है
जहाँ शत्रुदल उमड़ रहा है प्रबल सिन्धु की लहर समान
जहाँ वीरवर उठे हुए हैं ले लेने को सुयश महान
जहाँ शत्रु शोणित प्यासी असी अपनी प्यास बुझाती है
सहस दामिनी मान दमन कर चमक-चमक रह जाती है

जहाँ गर्जना सुन तोपों की घन होते लज्जित भयमान।
जाओ वीर वहीं उस रण में रणचण्डी करती हँसि गान ॥
हैं अतृप्त युगनैन हमारे यद्यपि तव दर्शन से आज।
किन्तु चाहना यही प्रबल है होवे पूर्ण तुम्हारा काज ॥
विजयी हो उस कठिन युद्ध में सब जन करैं तुम्हारा मान।
मन्दभाग्य जर्मन भी देखे हैं ये भारतीय सन्तान ॥
हम रखेंगे याद वीरवर किन्तु हमें तुम जाना भूल।
जिससे समरभूमि में जाकर अड़ो न चिन्ता बढ़े न शूल ॥
यह वीरता आत्मार्पण तुम कर देना भारत रणधीर।
कर्मवीर के कार्य यही हैं कर्मक्षेत्र में हो न अधीर ॥
जहाँ धनुर्धर अर्जुन से थे जहाँ भीम से थे बलवान्।
वही भूमि भारत है वीरो, तुम भी वही वीर सन्तान ॥
आज सफल जा करो समर में प्रिय माता का स्तनपान ॥
अहो दिखाओ अब दुनिया को अपने पूर्व समय का मान।
बने मूर्तिवत् शत्रु तुम्हारे लखै जान का सुभ शयतान ॥
रक्त-पियासी साथ क्षुधा के, रण में गड़ी शान्ति के काज।
अहो वीरवर श्री काली का खाली खप्पर भर दो आज ॥
तब हितलिए प्रसून बन्धुवर, सुर गण जोह रहे हैं बाट।
जाओ जाओ महासमर में रण का बढ़े चौगुना ठाट ॥
जाओ विजयिनी के सुपुत्र तुम विजयी ही होगे सब काल।
जहाँ तुम्हारी करें प्रतीक्षा विजयलक्ष्मी लेकर जयमाल ॥

जब बन्धु सब स्थानों पर सदा मान तुम पाओगे
अचल सुहागिन के जीवन तुम विजयी फिर बन जाओगे।
फिर आना फिर दर्शन होंगे बड़े हर्ष आदर के साथ
विजय पताका हम देखेंगे प्यारे बन्धु तुम्हारे हाथ।
'लली' पराजय कभी न होगी जिसके हों यह भाव महान
सदा सुशोभित रहे हृदय पर प्रिय भारत का ऊँचा मान।

महादेवी वर्मा

इनका जन्म सं० १९६३ में हुआ था। ये आजकल प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रिन्सपल हैं। इनकी कविता इस समय बहुत पसन्द की जाती है। नीचे कुछ कविताएँ उद्धृत की जाती हैं।

विधवा

क्यों व्याकुल हो विरहाकुल हो,
शोकाकुल हो प्यारी भगिनी।
सन्तापित हो अविकासित हो,
सर भारत की न्यारी नलिनी।

आश नहीं अभिताप नहीं,
निःसार तुम्हारे जीवन में।
क्यों तोष नहीं परितोष नहीं,
निर्दोष दुखारे जीवन में।

पावनता की मूर्ति अहो,
मृत प्राय हुई वैधव्यहनी।
करुणोत्पादक मूर्ति लखी,
अतिदीन हुई दुख रूप बनी!

हा हन्त! हुई यह दीन दशा,
फिर स्वार्थ दली दुर्दैव छली।
नव कोमल जीवन की कलिका,
हा! सूख चली बिन पूर्ण खिली।

अम्बर तन जीर्ण मलीन, खुले,
कच रुक्ष हुए शृङ्गार नहीं।

मधुराधर पर मुस्कान नहीं,
उर में आशा सञ्चार नहीं।
अश्रु भरे नयनाम्बुज में,
दीनाकृत है तन क्षीण अहो।
लखकर तव दीन दशा भगिनी,
है कौन धरे जो धैर्य कहो।
तुमने क्या कण्टक ही आकर,
इस जग उपवन में पाये हैं।
नये मुकुल आशा के,
कैसे हाहा मुरझाये हैं।
जला मनोरथ कंज किया हिम,
वैधव ने क्या मंजु खिला।
हृदय हुआ मरु भूमि गया,
सिंदूर साथ सौभाग्य चला॥
प्रकृति विपिन की कलिका से,
तुम पुत्री भारत माता की।
प्यारी आर्य कुमारी हो तुम,
सृष्टि पुनीत विधाता की।
शान्ति सौम्यता की प्रतिमा,
तुमने उन्नति थी अपनाई।

सुविचारों ने सद्भावों ने,
उत्पति तुम्हीं से थी पायी।
स्वार्थ अन्ध स्वेछाचारी,
पुरुषों ने किन्तु सताया है॥
हृदयहीन निर्भय हो, तुमको,
अवनत हीन बनाया है।
जब तुम थी निबोध मृदुल,
कलिका ही जीवन डाली की॥
कहती मधुर विकाश मधुर,
प्यारी रचना थी माली की।
शैशव में ही प्रिय स्वजनों ने,
तुम से कैसा बैर लिया।
स्वामि अर्थ अनभिज्ञ बालिका,
का विवाह अविचार किया॥
भाग्य चक्र ने उस पर तुम पर,
किया घोरतर अत्याचार।
उजड़ गया सौभाग्य दीन का,
बिगड़ गया सुखमय संसार।
होकर परबश वाध्य पड़ी हा,
कठिन आपदायें लेनी॥

ज्वालामय संसार कुँड में,
पड़ी जीवनाहुति देनी।
किया किसी ने दोष और,
प्रतिफल ऐसा हमने पाया॥

नहीं किसी को किन्तु तुम्हारा,
मुखदर्शन भी अब भाया।
करके सेवावृत्ति स्वजन की,
जीवन धारण करती हो।

होकर कुमति अधीन कभी फिर,
पद कुपंथ में धरती हो॥
ध्यान न देते किन्तु अहो,
निद्रित हो सारे भ्राता।

लज्जा पाते नहीं नहीं,
बनते अबलाओं के त्राता॥
स्वयं साठ के होने पर भी,
विषय वासना से जलते।

प्रियावियोग कठिन लगता है,
मरघट की मग में चलते॥
पाके किसी नवल कलिका को,
वृद्ध भ्रमर हरषाते हो।

होगा क्या भविष्य कलिका का,
नहीं ध्यान में लाते हो ॥
विधवाओं अबलाओं ने है,
किया कौन अपराध अहो ।
उनकी अवनति देख तुम्हें क्यों,
होता है आह्लाद कहो ।
दीन हुई श्रीहीन हुई,
मझधार बही भवसागर में ॥
आधार गया सुखसार गया,
और आश रही करुणाकर में ।
देशबन्धु यदि नहीं कभी तुम,
इनकी ओर निहारोगे ॥
दैवपीड़िता विधवाओं का,
दारुण कष्ट निवारोगे ।
पाय मूर्त्ति बन जायेंगी,
हैं जो पावनता पूर्त्ति अभी ॥
तुम भी होगे हीन नहीं,
पाओगे उन्नति कीर्त्ति कभी ।

मुरझाया फूल

था कली के रूप शैशव,
में अहो सूखे सुमन ।
हास्य करता था खिलाती,
अङ्क में तुझको पवन ॥१॥

खिल गया जब पूर्ण तू,
मञ्जुल सुकोमल पुष्पवर ।
लुब्ध मन के हेत मँडराते,
लगे उगने भ्रमर ॥२॥

स्निग्ध किरणें चन्द्र की,
तुझको हँसाती थीं सदा ।
ओस मुक्ता जाल से,
शृंगारती थी सर्वदा ॥३॥

वायु पंखा झल रही,
निद्राविवश करती तुझे ।
यत्न माली का रहा,
आनन्द से भरता तुझे ॥४॥

कर रहा अठखेलियाँ,
इतरा सदा उद्यान में ।

अन्त का यह दृश्य आया,
था कभी क्या ध्यान में ॥५॥
सो रहा अब तू धरा पर,
शुष्क बिखराया हुआ ।
गन्ध कोमलता नहीं,
मुख मंजु मुरझाया हुआ ॥६॥
आज तुझको देख कर,
चाहक भ्रमर आता नहीं ।
वृक्ष भी खोकर तुझे,
हा ! अश्रु बरसाता नहीं ॥७॥
जिस पवन ने अंक में,
ले प्यार था तुझको किया ।
तीव्र झोंके से सुला,
उसने तुझे भूपर दिया ॥८॥
कर दिया मधु और सौरभ,
दाना सारा एक दिन ।
किन्तु रोता कौन है,
तेरे लिए दानी सुमन ॥९॥
मत व्यथित हो पुष्प किसको,
सुख दिया संसार ने ।

स्वार्थमय सबको बनाया,
है यहाँ करतार ने ॥१०॥
विश्व में हे पुष्प तू,
सबके हृदय भाता रहा।
दानकर सर्वस्व फिर भी
हाय हरखाता रहा ॥११॥
जब न तेरी ही दशा पर,
दुख हुआ संसार को।
कौन रोयेगा सुमन,
हमसे मनुज निस्सार को ॥१२॥

मेरा जीवन

स्वर्ग का था नीरव उच्छ्वास,
देववीणा का टूटा तार।
मृत्यु का क्षणभंगुर उपहार,
रत्न, वह प्राणों का शृङ्गार।
नई आशाओं का उपवन,
मधुर वह था मेरा जीवन ॥१॥
क्षीरनिधि की गुप्त तरंग,
सरलता का प्यारा निर्भर।

हमारा वह सोने का स्वप्न,
प्रेम की चमकीली आकार।
शुभ्र जो था निर्मेघ गगन,
सुभग मेरा संगी जीवन ॥२॥

अलक्षित आ किसने चुपचाप,
सुना करके सम्मोहन तान।
दिखा कर माया का साम्राज्य,
बना डाला इसको अज्ञान।
मोह मदिरा का आस्वादन,
किया क्यों हे भोले जीवन ॥३॥

तुम्हें ठुकराता है नैराश्य,
हँसा जाती है तुमको आश।
नचाता है तुमको संसार,
लुभाता है तृष्णा का हास।
मानते विष को संजीवन,
मुग्ध मेरे भूले जीवन ॥४॥

न रहता भौंरों का आह्वान,
नहीं रहता फूलों का राज्य।
कोकिला होती अन्तर्ध्यान,
चला जाता प्यारा ऋतुराज।

असम्भव है चिर सम्मेलन,
न भूला क्षण भंगुर जीवन ॥५॥

विकसते मुरझाने को फूल,
उदय होता छिपने को चन्द।
शून्य होने को भरते मेघ,
दीप जलता होने को मन्द।
यहाँ किसका अनन्त यौवन,
अरे अस्थिर छोटे जीवन ॥६॥

छलकती जाती है दिन-रैन,
लबालब तेरी प्यारी मीत।
ज्योति होती जाती है क्षीण,
मौन होता जाता संगीत।
करो नयनों का उन्मीलन,
क्षणिक हे मतवाले जीवन ॥७॥

शून्य से हो जाओ गम्भीर,
त्याग की हो जाओ झंकार।
इसी छोटे प्याले में आज,
डुबा डालो सारा संसार।
लताओं में यह मुग्ध सुमन,
बनो ऐसे छोटे जीवन ॥८॥

सखे यह है माया का देश,
क्षणिक है मेरा तेरा संग।
यहाँ मिलता कांटों में बन्धु,
सजीला हा फूलों का रंग।
तुम्हें करना विच्छेद सहन,
न भूलो ऐ प्यारे जीवन ॥९॥

स्मृति

विस्मृति तिमिर में दीप हो,
भवितव्यता उपहार हो।
बीते हुए का स्वप्न हो,
मानव हृदय का सार हो ॥१॥
तुम सान्त्वना हो दैव की,
तुम भाग्य का बरदान हो।
टूटी हुई झंकार हो,
गतकाल की मुसकान हो ॥२॥
उस लोक का सन्देश हो,
इस लोक का इतिहास हो।
भूले हुए का चित्र हो,
सोई प्रवृति का हास हो ॥३॥
सुखदा कहीं, बनती कहीं,
जो जन्मदा सन्ताप की।

आनन्द का रवि हो कहीं,
निशि हो कहीं अनुताप की ॥४॥
अस्थिर चपल संसार में,
तुम हो प्रदर्शक संगिनी ॥
निःसार मानसकोष में,
हो मंजु हीरक की कनी ॥५॥
तुम से हुये जागृत हमारे,
भाव वे सोये हुए।
तुम ने मिला हम से दिये
आदर्श सब खोये हुये ॥६॥
सुधि तुम दिला जाती सदा,
हमको अतीत व्यतीत की।
भूले हुये उत्कर्ष उसकी,
पूर्वगौरव गीत की ॥७॥
दुर्दैव ने ऊपर हमारे,
चित्र जो अङ्कित किये।
देकर सजीला रङ्ग तुमने,
सर्वदा रंजित किये ॥८॥
तुम भूलने देती नहीं,
दुष्कर्म के परिणाम को।

तुम ध्यान में लातीं सदा,
　　उस अन्त के विश्राम को ॥९॥
तुम हो सुधाधारा सदा,
　　सूखे हुये अनुराग को।
तुम जन्म देती हो सखी,
　　आशक्ति को वैराग को ॥१०॥

———

दूसरा खण्ड

रसिक बिहारी

इनका नाम बनी ठनी जी था। ये महराज नागरीदास जी की दासी थीं और सदा महाराज की सेवा में रहती थीं। ये कृष्ण भक्त और काव्यप्रेमिका थीं। "नागर समुच्चय" में इनकी कवितायें हैं। यह ग्रन्थ नागरीदास जी के पद्यों का संग्रह है। उसी के अन्त में इनके भी पद्य हैं। नमूना नीचे देखिये।

रतनारी हो थारी आँखड़ियाँ ।
प्रेम छकी रसबस अलसाणी जाणि कमल की पाँखड़ियाँ
सुन्दर रूप लुभाई गति मति हौं गई यूँ मधु माँखड़ियाँ
रसिक बिहारी वारी प्यारी कौन बसी निस काँखड़ियाँ

(२)

आज बरसाने मङ्गल माई ।
कुँवर लली को जनम भयो है घर घर बजत बधाई
मोतिन चौक पुरावो जावो देहु असीस सुहाई
रसिक बिहारी की यह जीवनि प्रकट भई सुखदाई

(३)

आज बधावो वृषभान के धाम ।
मङ्गल कलश लिये आवत हैं गावत ब्रज की बाम
कीरति के कीरति प्रगटी है रूप धरें अभिराम
रसिक बिहारी की यह जोरी हौंनी राधा नाम

(४)

मैं अपनो मन-भावन लीनों, इन लोगन को कहा कीनों
मन दै मोल लयोरी सजनी, रत्न अमोलक नन्द दुलारों
नवल लाल रंग भीनो ।
कहा भयो सब के मुख मोरे मैं पायो पीव प्रवीनों
रसिक बिहारी प्यारो प्रीतम सिर बिधनो लिख दीनों

[५]

बनि बैठे दुकूल बैठे परजंक ।
कमल नयन अंग अंग छबि निरखत प्यारी परे जु अंक ।।
धन्य धन्य पिय पानि अपनयों ज्यों निधि पायो रंक ।
रसिक बिहारी यह सुख बिलसत तहाँ निकट निरसंक ।।

[६]

उड़ि गुलाल धूँधर भई, तनि रह्यो लाल बितान ।
चौरी चारु निकुँज में, ब्याह फाग सुखदान ।।
फूलन के सिर सेहरा, फाग रंग मंगे बेस ।
भाँवर ही में चलत दोउ, लै गति सुलभ सुदेस ।।
भीज्यो केसर रंग सों, लगे अरुन पर पीत ।
डाले चांचा चौक में, गहि बहियाँ दोउ मीत ।।
रच्यो रङ्गीली रैन में, होरी के बिच ब्याह ।
बनी बिहारन रसमयी, रसिक बिहारी-नाह ।।

रत्नकुँवरि बी

ये मुर्शिदाबाद के जगत्सेठ के घराने क
थीं। प्रसिद्ध राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द
इनके पौत्र थे। "प्रियरत्न" नाम की इनक
एक पुस्तक राजा शिवप्रसाद ने १८८८ ई० मे
छपाई थी। उसमें बीबीजी की कविताओं
का संग्रह हुआ है। ये कृष्ण भक्त थीं; इनकी
कविता देखने से यह स्पष्ट मालूम पड़ता है
कि भाषा और भाव पर इनका पूर
अधिकार था। ये संस्कृत और फ़ारसी क
बड़ी पण्डिता थीं।

चौपाई

भक्ताधीन विरद प्रभु केरे। गावत वाणी वेद घनेरे ॥
नतत रहत भक्त के पासा। पुरवत हैं प्रभु तिनकी आसा ॥
जो सप्रेम हरि सो मन लावै। तिनको कबहूँ नहीं बिसरावै ॥
ग्राह ग्रसित गजराज छुड़ाये। गरुड़ छाड़ि तँह आतुर धाये ॥
पुनि प्रभु पाँडव जरत बचायो। द्रुपद सुता को वसन बढ़ायो ॥
जन प्रह्लाद अभय करि थाप्यो। ताही बार न वारही व्यापो ॥
जो जन मन ते ध्यावहीं जैसे। ता कहँ प्रभु फल देते वैसे ॥
अग जग सकल विश्व के स्वामी। सर्वमयी सब अन्तर्यामी ॥
प्रेमयुक्त ब्रज जन मन ध्यायो। ताते प्रेम हृदय हरि छायो ॥
प्रभु के मन यह रहत सदा ही। ब्रजवासिन ते भेट्यो तांहीं ॥
एकदिन दिनकर ग्रहण भयो जब। बहु नर नारी जात चले तब ॥
जाति परम कुरुक्षेत्रहिं पावन। सकल चले तहँ करन नहावन ॥
यह सुनि यदुनन्दन मन मानी। एक पंथ द्वै कारज ठानी ॥
कह्यो यदुनपति यह कुलकेतू। हम अब चलो चलें कुरुखेतू ॥
जेते अरु पुरजन पुरवासी। तिनहूँ कहहू यह बात प्रकासी ॥
ग्रहण नहाँहू सकल तहँ जाई। सुनी आयसु सब सीस चढ़ाई ॥
मुदित सकल आनन्द रस पागे। गवन साज साजन कहँ लागे ॥
अधिकारिन सब काज सँवारे। नाना वाहन सुभग सिंगारे ॥
सुनत परस्पर सब नर नारी। घर-घर निज-निज सौ ज सवारी ॥
द्वारवती के जिते निवासू। चले जात सब परम हुलासू ॥

कढ्यो कटक अति परम विशाला। चले संग अगणित भूपाला
कारे करिवर गरजन लागे। सावन घन जनु लखि अनुरा
अगणित तुरंग चले हिहिनावत। खच्चर ऊंट वसह अहरावत
अमित भीर मग परत न पायो। धूरि धुन्ध नभ मण्डल छाय
मग में होत कोलाहल भारी। मुदित करत कौतुक नर नार
यों पहुँचे कुरुखेतहिं जाई। परि गयो कटक तहाँ छिति छा
हाट बजार दूकान सुहाई। तहँ सब वस्तु मिलत मन भा
देश देश के यात्री आये। भये तहाँ मिलि आनन्द बधा

दोहा

भये मगन सब प्रेम रस, भूलि गये निज देह।
लघु दीरघ वै नारि नर, सुमिरत श्याम सनेह॥
कहत परस्पर युवति मिलि, लै लै कर अँकवार।
प्रीतम आये री सखी, तन साजहूँ शृंगार॥
इक आयी आनन्द उमंगि, प्यारिहिं देत बधाय।
प्राणनाथ सुख दैन इह, मोहन उतरे आय।
तहँ राधा की कछु दसा, वर्णत आवै नाहिं।
मलिन वेशभूषण रहित, विवस रहित तन माहिं॥

प्रतापबाला

ये जोधपुर के महाराज तख़्तसिंहजी की महारानी थीं और जामनगर की राजकन्या। इनका जन्म १८९१ में हुआ था। १९०८ में विवाह हुआ था। ये महारानी बड़ी उदार और परोपकारी थीं। मारवाड़ के एक अकाल में इन्होंने बड़ी उदारता से अपनी प्रजा की रक्षा की थी।

सं० १९२९ में ये विधवा हुईं। तख़्तसिंह जी के बाद प्रतापबाला जी के प्रथम पुत्र का राज्याभिषेक हुआ, पर ८ वर्षों में ही उनका भी अन्त हो गया। इनके दूसरे पुत्र भी जाते रहे। अब वे कृष्ण ध्यान में लीन हुईं। उनकी कवितायें भी उसी समय की हैं। "प्रताप कुँवरि रत्नावली" नाम की पुस्तक में इनकी कवितायें संगृहीत हैं। इस पुस्तक में अन्य कवियों की कवितायें भी हैं, पर प्रधानता इनकी कविता को ही प्राप्त है। नीचे इनकी कवितायें उद्धृत हैं।

(१)

वारी थाड़ा मुखड़ा की श्याम सुजान ।
मन्द मन्द मुख हास विराजै कोटिक काम लजान ।
अनियारी अँखिया रसभीनी बाँकी भौंह कमान ॥
दाड़िम दसन अधर अरुणारे बचन सुधा सुखखान ।
जामसुता प्रभुसों कर जोरे मेरे जीवन प्रान ॥

(२)

लगन लारी लागी चतुरभुज राम ।
श्याम सनेही जीवन ये ही औरन से क्या काम ।
नैन निहारूँ पल न बिसारूँ सुमिरूँ निसिदिन श्याम ॥
हरि सुमिरन तें सब दुख जावे मन पावे बिसराम ।
तन मन धन न्योछावर कीजै कहत दुलारी जाम ॥

(३)

चतुरभुज झुलत श्याम हिंडोरे ।
कंचन खंभ लगे मणिमानिक रेसम की रंग डोरें ॥
उमड़ि घुमड़ि घन बरसत चहुँदिसि नदियाँ लेत हिलोरें ।
हरि हरि भूमि लता लपटाई बोलत कोकिल मोरें ॥
बाजत बीन पखावज बंशी गान होत चहुँ ओरें ।
जामसुता छबि निरखि अनोखी वारूँ काम किरोरें ॥

(४)

प्रीतम हमारो प्यारो श्याम गिरिधारी हैं।
मोहन अनाथनाथ सन्तन के डोलै साथ,
वेद गुन गावैं गाथ गोकुल बिहारी हैं।
कमल विशाल नैन निपट रसीले बैन,
दीनन को सुख दैन चारिभुजा धारी हैं।
केशव कृपानिधान वाही सों हमारो ध्यान,
तन मन वारूँ प्रान जीवन मुरारी हैं।
सुमिरूँ मैं साँझ-भोर बार बार हाथ जोर,
कहत प्रताप भोर जाम की दुलारी हैं।

(५)

भजु मन नन्दनन्दन गिरिधारी।
सुख-सागर करुणा को आगर भक्तवछल बनवारी ॥
मीरा करमा कुबरी सबरी तारी गौतमनारी।
वेद पुरानन में जस गायो ध्याये होवत प्यारी ॥
जामसुता को स्याम चतुरभुज लेजा खबरि हमारी।

(६)

मो मन परी है यह बान।
चतुरभुज को चरण पढिहरि ना चाहूँ कछु आन।
कमल नैन विसाल सुन्दर मन्द मुख मुसकान ॥

सुभग मुकुट सुहावनो सिर लसे कुण्डल कान।
प्रगट भाल विशाल राजत भौंह मनहुँ कमान॥
अङ्ग अङ्ग अनङ्ग को छवि पीत पट पहिरान।
कृष्णरूप अनूप को मैं धरूँ निसि दिन ध्यान॥
सदा सुमिरूँ रूप पल पल कला कोटि निधान।
जामसुता परताप के भुज चार जीवन-प्रान॥

सुँदर कँवरि बाई

इनका जन्म कृष्णगढ़ के राठौर राजा रणजीतसिंह के यहाँ हुआ था। संवत् १७९१ में ये उत्पन्न हुईं। उस समय देश का राजनीतिक वायुमण्डल क्षुब्ध होने के कारण इनका ब्याह ३१ वर्ष की उमर में राघोगढ़ के राजकुमार बलवन्त सिंह के साथ हुआ। वैवाहिक जीवन भी इनका सुखमय न था। उस समय मरहठों के अत्याचार राजपूताने के राजाओं पर हो रहे थे। राघोगढ़ के राजा भी उससे बरी न थे।

इस विकट परिस्थिति में भी ये कविता करती रहीं। इनका परिवार ही कवि था। इनकी माता कवि, इनके भाई नागरीदास कवि, यहाँ तक कि बनीठनी जी जो इनकी दासी थीं वे भी कवि थीं। इनके बनाये नीचे लिखे ग्यारह ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। नेह निधि, वृन्दावन गोपी माहात्म्य, संकेत युगल, रसपुंज, प्रेमसंपुट, सार संग्रह रत्नाकर, गोपी माहात्म्य, भावन प्रकाश, रामरहस्य, पद्य तथा स्फुट कवित्त।

[१]

आज्ञा लहि घनश्याम की चली सखी वहि कुञ्ज।
जहाँ विराजत भामिन श्री राधा सुखपुञ्ज॥
श्री राधा सुखपुञ्ज कुञ्ज तिहि आई सहचरि।
वह कन्या को संग लिये प्रेमातुर मदभरि॥
कहत भई करजोरि निहारन बात सयानिनि।
तजहु मान अब मान मान मो राखहु भामिनि॥

[२]

प्रिय के प्रान समान तो सीखी कहाँ सुभाय।
चख चकोर आतुर चतुर चंदानन दरसाय॥
चंदानन दरसाय अरी हा हा है तोसों।
वृथा मान यह छाँड़ि करी पिय की सुनि मोसों॥
सूधै दृष्टि निहारि प्रिया सुनि प्रेम पहेली।
जल बिन झष अहि मणि जु हीन इन गति उन पेली॥

[३]

गति सो यह कि चलै छबि सो लटकि चालु,
उर बनमाल है विशाल लहकारी जू।
मरकी किरन कटि जीव की पुरनि दृग,
उझकि दुरनि भौंहें भाव भरी भारी जू॥

नाचत सुलफ नट नागर रसिक छैल,
लखि रिझवारी सब जात वारी वारी जू ।
चित्त की लिखी सी राधे बिबस छवी सी रही,
आँखिन की आँखें बांधी माखिन बिहारी जू ॥
स्याम रूप सागर में नैर वार पारथ के,
नचत तरंग अंग अंग मरणजी है ।
गाजत गहर धुनि बाजत मधु बैन,
नागिन अलक जुग सोधें सगवगी है ॥
भँवर त्रिभंग ताई पान पै लुनाइता में,
मोती मणि जालन को जोत जगमगी है ।
काम प्रीत प्रबल धुकाव लोपी पाज तातें,
आज राधे राजकी जहाज डगमगी है ॥

[४]

मन रिझवार ये तो घायल सुमार बिन,
सुभट करारे ज्यों संभार को संभारि कै ।
ललिता कहत अरे सुनहु गँवार ग्वार,
करत उभार काहे ऐसे गाल मारि कै ॥
आछे जयवार देखे मदन मुरारि जू को,
रहो रे लबार गिरिवान मुँह डारि कै ॥
नाचत नचाय लीन्हें कैसे मनमाने कीन्हें,
जीत है हमारी वृषभानु को कँवारि कै ॥

[५]

सुन्दर स्याम मनोहर मूर्त्ति श्री ब्रजराज कुँवर बिहारी।
मोर पखा सिर गुंज हरा बनमाल गले कर बंसिकाधारी॥
भूषन अंगके संग सुसोभित लोभित होत लखैं ब्रजनारी।
राधिकावल्लभ की दृग गेह बसो नव गेह रहों पतिवारी॥

[६]

बोलि कै जिठानी दिवरानी श्री ब्रजेश्वरी तू,
गोपिन कुँवारी औ दुलारी सब संग लै।
आँगन उदार ठौर ठौरहिं विविध झूलैं,
झूलत झुलावत लड़ावत उमंग लै॥
हँसहिं हँसावै सब मोद सरसावैं अति,
चुहल मचावैं छबि छावैं पहि वंग लै।
रहस रचावैं पिया तबहि लिवावैं तहाँ,
झुकि झुँझलावैं मुसकावैं कहैं रंग लै॥

[७]

जित तित झूलैं सब गोपिका समूह झुंड,
झमकि झकोरन की सोभा सरसावहीं।
पटुरी की डोरन हिलोरन द्रुमन मानों,
अछुरी दै घटा और और घन आवहीं॥

कोऊ चवपालन चलन सुरामनी ज्यों,
रीझतीज रमन विमानन पै धावहीं ॥

[८]

चतुरंग चमू अति छवि विराज, मणि कनक साजि गराज बाज।
पुनि दुरद पीठ राजें निशान, धुनि होत दुन्दुभी छन लजान ॥
केउ चलै गंजन पर गुनी नाम, जावें जो कीर्ति कीनी सुराम।
पुनि चढ़े अश्व शोभित अपार, छत्रें सुभट साजे सिंगार ॥
पखरैत किते हय पै सवार, जिन जिरह टोप आवै अपार।
राज अनंत सौवत सुढंग, कर गहें चाप कटि कसि निषंग ॥
सुन्दर स्वर की शोभा अनूप, सुरजन विमान नहीं लगत जूप।
कसि कमर अमर से चले बीर, अति भई बाहिनी की जुभीर ॥
पैदल दल शोभा के समूह, लखि चकित रहत सुर विविध जूह।
है कितो कटक नाहिन प्रमान, सोभा समुदु मनो उमड़ आन ॥

[९]

बाजत नगारें अरु गाजत गयंद भारे,
भयमान अरी की नरी न गही डरी हैं।
दल पारावार को अपार रव रह्यो छाप,
भाजैं राज राव उठ उठैं धरधरी हैं ॥
बाँधत जे बान सुर तावे तेऊ बहराने,
केऊ नजराने दै पुरी की रच्छा करी हैं।

अलका मैं अलकनि मैं मेक माहिं पलकन मैं,
सूर की बधू कै हू चमू की रज भरी हैं ॥

[१०]

घन की घटा सी चढ़ी धूर सैन पायन की,
दामिनी झमक छबि तामैं बरछान कै ॥
पीठ गजराजहिं निसान फहरान पीत,
बिवधे मणिन दण्ड इन्दु धनुबान कै ॥
धाय रवि छादित अराम मग छांह चलै,
प्रेम के विनोदी राय रङ्ग सरसान कै ॥
जानहु सुजान भान कुल के बड़े के कान,
छायो मानो रंज को बितान आसमान कै ॥

———

खगनियाँ

उन्नाव ज़िला के रणजीत पुरवाँगाँव के आसू तेली की यह कन्या थी। यह तेलिन थी इसी से इसकी शिक्षा-दीक्षा का अनुमान किया जा सकता है। इसकी पहेलियाँ ही उपलब्ध हैं पता नहीं अन्य विषयों पर इसने कविता की है या नहीं। पर इतने ही से यह बात मान लेनी चाहिये कि कविता के लिये पढ़ने की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी कि शक्ति की। पढ़े लिखे कवि की कविता में चमत्कारातिशय से हम इन्कार नहीं कर सकते, पर कृत्रिमता और स्वाभाविकता में अन्तर भी तो होता है।

पहेलियाँ

आधा नर आधा मृगराज, युद्ध बिआहे आवे काज,
आधा टूट पेट में रहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (नारसिं

लंबी चौड़ी आँगुर चारि, दुहूँ ओर से डारिन फार,
जीव न होय, जीव को गहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (कं

बासन खावै सदा समोद, छोटी मोटी लाल बिनोद,
नेरे नहीं दूर में रहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (कचौ

पेट फटा रहता है सदा, बड़े जोर से बजता कहाँ,
पूजा अरचा में वह रहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (शं

रहता है पीताम्बर काँधे, गूजैं फूलै पर मन साधे,
काला होता रस को गहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (भौं

नारी देखी एक अनोखी, बंद न होती चलती चोखी,
मरना जीना तुरत बतलाती, कभी नहीं कुछ खाना खाती,
सदा हाथ में मेरे रहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (नाड़

एक नार होती जब नङ्गी, झटपट बन जाती है जंगी,
लोहू की वह प्यासी रहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (तलवा

बाँध गले में उसकी डोरी, देते लड़के हैं झकझोरी,
आसमान में उड़ता रहता, खाकर झोके बहता रहता,
सूरत सदा तिकोनी रहै, बासू केर खगनियाँ कहै। (पतं

बागों में वह सदा सुहावै, मोती की बूँदे बरसावै,
सदा मौन स्वाती वह रहै, वासू केर खगनियाँ कहै। (कुँआ)
रहती अंगरेज़न के साथ, उसे नवाते हैं सब माथ,
बड़ी लड़ाई में वह जावै, धड़ाधड़ाका शब्द सुनावै,
सदा निशाना अपना गहै, वासू केर खगनियाँ कहै। (बन्दूक)
दोनों बहनें बड़ी अनोखी, लखने में यह सबसे हैं चोखी,
जिससे ये दोनों लग जातीं, बिना न देखे उसे अघातीं,
बिना न इनके जीवन रहै, वासू केर खगनियाँ कहै। (आँखें)

बुन्देला बाला

ये प्रसिद्ध कवि श्रीभगवानदीन जी 'दीन' कवि की दूसरी स्त्री थीं। दीन जी ने इनको कविता की शिक्षा दी थी। इनका पितृकुल गाज़ीपुर के पास एक गाँव में रहता है। इनका जन्म १९४० संवत् में हुआ था। बीस वर्ष की अवस्था में इनका ब्याह हुआ और १९६६ सं० में छब्बीस वर्ष की अवस्था में इनका परलोक-वास हुआ। इस थोड़े समय में जो कविताएँ इन्होंने कीं उनसे इनकी प्रतिभा का पूरा पूरा परिचय प्राप्त हो जाता है।

चाहिए ऐसे बालक

[१]

परशुराम, श्रीराम, भीम, अर्जुन, उद्दालक।
गौतम, शंकर, सरिस धर्म मत्त के संचालक ॥
उत्साही, दृढ़ जंग प्रतिज्ञा के प्रतिपालक।
शारीरिक मतिष्क शक्ति बल अरिगण घालक ॥
काज करें मन लाय बनें शत्रुन उर शालक।
अब भारत मातहिं चाहिये ऐसे बालक ॥

[२]

दुर्बल अरु भयभीत सदा जो कहत पुकारी।
"अरे बाप! यह काज हमें सूझत अति भारी ॥"
"मैं नाहीं कर सकता" शब्द मुख तें न उचारें।
"हाँ करिहों उद्योग" सहित उत्साह पुकारें ॥
सत्य भाव तें कहें, करें अरु बनें न टालक।
अब भारत मातहिं चाहिए ऐसे बालक ॥

[३]

जो करना है उसे करें अपने निज हाथन।
देश भलाई हेत करें अभिलाषा लाखन ॥
कठिन परिश्रम देखि न कबहूँ मन ते हारें।
भारी भार निहारि न कबहूँ कंधा डारें ॥

करैं काज बनि कुलकलंक कारिख प्रच्छालक ।
अब भारत मातहिं चाहिए ऐसे बालक ॥

[४]

देखि कठिन कर्तव्य उसे जूझ जनि जानैं ।
अपना धर्म विचार उसे अपना कर मानैं ॥
ऐसे बालक जबहिं देश के मुखिया ह्वै हैं ।
तब भारत के सकल दुख दरिद्र नशैहैं ॥
मिटिहैं हिय को ताप और कटिहैं जंजालक ।
अब भारत मातहिं चाहिये ऐसे बालक ॥

सावधान

[१]

सावधान हे युवक उमंगो, सावधानता रखना खूब ।
युवा समय के महा मनोहर विषयों में मत जाना डूब ॥
सर्वकाज करने के पहिले पूँछो अपने दिल से आप ।
इसका करना इस दुनिया में पुण्य मानते हैं या पाप ॥

[२]

जो उत्तर दिल देय तुम्हारा उसे समझ लो अच्छी भाँति ।
काज करो अनुसार उसी के नष्ट होय दुखों की पाँति ॥
कभी भूल ऐसा मत करना अच्छी के लालच में आज ।
देना पड़े कल्ह ही तुमको रत्नमाल सम निज कुल लाज ॥

[३]

युवा समय के गर्म रक्त में मत बोओ तुम ऐसा बीज ।
वृद्ध समय के क्षीण रक्त में फूलै चिन्ता फलै कुबीज ॥
पश्चात्ताप कुरस नित टपकैं बदनामी गुठली दृढ़ होय ।
उँगली उठै वार में चलते मुँहभर बात न बूझै कोय ॥

[४]

यौवन ऋतु बसन्त में प्यारे कुसुम समूह देखि मत भूल ।
दबादबा कर युक्ति सहित रख निज उमंग के सुन्दर फूल ॥
सावधान ! इनको बिनष्ट कर फिर पीछे पछतावेगा ।
वृद्ध वयस सम्मान सुगंधित फिर कैसे महकावेगा ॥

[५]

परमेश्वर की न्याय-तुला की डांड़ी जग में जाहर है ।
उसको ऊँच नीच कछु करना मानव-बल से बाहर है ॥
अहंकार सर्वदा जगत में मुँह की खाता आया है ।
नय, नम्रता, मान, पाते हैं सब ने यही बताया है ॥

[६]

है प्रत्येक भव्यता के हित इस जग में निकृष्टता एक ।
विषय रूप मिष्ठान्न मध्य है विषमय आमय कीट अनेक ॥

इन्द्रिय विषय शिखर दूरहिं तें महा मनोरम लगते हैं।
निकट जाय जांचे समझोगे, रूप हरामी ठगते हैं॥

[७]

है प्रत्येक ऊंच में नीचा प्रतिमिठास में कडुवा स्वाद।
प्रतिकुकर्म में शर्म भरी है भर्म खोय मत हो बरबाद॥
प्रकृति नियम यह सदा सत्य है, कैसे इसे मिटाओगे।
जग में जैसा कर्म करोगे वैसा ही फल पाओगे॥

सम्बोधन

(माता और पुत्र की बातचीत)

माता:—

हे प्यारे कदापि तू इसको तुच्छ श्याम रेखा मत मान।
यह है शैल हिमाचल इसको भारत भूमि पिता पहिचान॥
नेह सहित ज्यों पितु पुत्री को सादर पालन करता है।
यह हिमगिरि त्योंही भारतहित पितृभाव हिय धरता है॥
गंगा यमुना युगुल रूप से प्रेम धार का देकर दान।
भारत भूमि रूप दुहिता का नेह सहित करता सनमान॥

पुत्र:—

यह जो बाम और नक्शे के रेखामय अतिशय अभिराम।
शोभामय सुन्दर प्रदेश है मुझे बता दे उसका नाम॥

माताः—

बेटा ! यह पंजाब देश है पुण्यभूमि सुख शान्त निवास।
सर्व प्रथम इस थलपर आकर किया आरयों ने निजवास॥
कहीं गान ध्वनि, कहीं वेद ध्वनि, कहीं महामन्त्रों का नाद।
यज्ञधूम से रहा सुवासित यह पंजाब सहित अह्लाद॥
इसी देश में बस के 'पोरस' ने रक्खा है भारत मान।
जब सम्राट सिकन्दर आकर किया चाहता था अपमान॥
इससे नीचे देख पुत्र यह देश दृष्टि जो आता है।
सकल-बालुकामय प्रदेश यह राजस्थान कहाता है॥
इसके प्रति गिरिवर पर बेटा अरु प्रत्येक नदी के तीर।
देशमान हित करते आये आत्मविर्सजन छत्री वीर॥
कोई ऐसा थान नहीं है जहाँ अमर चिह्नों के रूप।
वीर कहानी रजपूतों की लिखी न होवे अमर अनूप॥
छत्री कुल अवतंस वीरवर है 'प्रताप' जी का यह देश।
रानी 'पद्मावती' सती ने यहीं किया है नाम विशेष॥
छत्रीवंश जात को चहिए करना इसको नित्य प्रणाम।
इससे छत्री वर्ग का जग में सदा रहेगा रोशन नाम॥

रमादेवी

इनका जन्म प्रयाग में १९४० सं० में हुआ था। इनके पिता ने घर पर ही एक अँग्रेज़ महिला द्वारा इन्हें शिक्षा दिलायी थी। अबला पुकार और रमा विनोद नामक इनकी दो पुस्तकें प्रकाशित हैं। ये स्त्री समाज में प्रतिष्ठित कवि हैं। इनकी कविताएँ नीचे उद्धृत की जाती हैं।

[१]

घन रहित नभ नील प्रगट्यो धौं सखी शृंगार है।
रेख केसर की सरी भ्रू शीलता की भार है॥
चन्द्र चन्द्रन चंद्रिका की दामिनी द्युति जालिमा।
बाल दिन कर भाल रोरी की मनोहर लालिमा॥
मैं थकी छवि देख कर धौं आज मारुत धीर है।
देखु आली छवि निराली आज जमुना तीर है॥

[२]

दो पुरन्दर चाप सुन्दर पावनी भ्रू वंकता।
धौं निसाकर नीलघनयुत दिव्य लोचन लोलता॥
धौं य छवि शृंगार है आगार अमृत के भरे।
तान सुनकर बाँसुरी की रूप लोचन का धरे॥
है निसाकर या दिवाकर ने किया रथ धीर है।
देखु आली छवि निराली आज जमुना तीर है॥

[२]

नवल नीरज नील जल पै धीर निरखन की छटा॥
धौं सखी मृदु बाल ससि पै सांवरी घेरी घटा॥
धौं सजन भ्रू भौंर जल में मीनयुग छबि में फँसी।
धौं चपल ससि की कला प्रतिबिम्ब बन जल में धँसी॥

चित्त चञ्चल धौं अचञ्चल आजु जमुना नीर है।
देखु आली छवि निराली आज जमुना तीर है ॥

[४]

जो सुधि आवत मोहन की अरी जान परै ब्रज पै दुख भीज है
जानै 'रमा' मथुरा ते फिरैं कब कान्ह जसोमति काठ तबीज है
जानी परै सखी आदिहिं ते मन मोहन पै कछु कंस की खोज है
स्याम नदानो की चञ्चलता अति सुन्दरता ललिता विष बीज है।

[५]

सुन लो हठीले कान्ह गोकुला को आना जाना,
चाहत छुड़ाना दैया बात कछू जानै ना।
सुनत हजारों ताना मिलत बहाना नाहिं,
देखना दिखाना श्याम शर मो पै ठानै ना ॥
जाना बरसाना मोर इतै फेरि आना,
लाल शोर ना मचाना कंस राजा सुनि पावै ना।
'रमा' न रमाना चित्त दही है बिराना,
लाल तनक चखाये बिना मन मोर मानै ना ॥

[६]

मानी ब्रह्म बानीं सों पताल जान ठानी चली,
मुक्ति की निसानी धरा चाहत फटीसी है।

आये भई दंग लोप गंग की तरंग देख,
संभु की जटा की छटा धुर लौं अटीसी है।
देख के अखण्ड तप गंगा जी प्रचण्ड 'रमा',
त्याग के घमंड सम्भु सीस से छुटीसी है।
भूतपित्र तारन को नर्क से उबारन को,
पन्नगी पिनाकी पग पूजि पलटीसी है॥

[६]

नहिं जानत खेल खेलाड़ी बने मन आपन हार गये अब सेते।
बसते नहिं मानसरोवर में बसते चली अंति कहीं अब चेते।
बसते तब पत्थर के बन के पग भूलिहु प्रेम के पंथ न देते।
वह प्रीति सराहिये मीत 'रमा' पग कारट के संग हमें कर लेते॥

[७]

हम चाहत चातुर चंद तुम्हें तुमको हमरी कुछ चाह नहीं।
कहुँ पूरे अधूरे दिखाते कभी छिपते हो दुरन्त इकन्त कहीं॥
करि आदर बादर सीस चढ़ें अलि मंडल मोद रचें मनहीं।
तुम सीतल हो हम आग चुगे कठिनाई पड़े प्रिय जाऊँ नहीं॥

[८]

हम चाहैं तुम्हें सो भले ही कहैं हम पै तुम्हरो इतबार नहीं।
तुम आग से खेलत हो दिल पै हमरे कहीं दाग दरार नहीं॥

हम होत निसा नित आवत हैं तुम्हरे मिलने को करार नहीं
सच्च प्रेम को पंथ कराल बड़ा सुनो, खाना कहीं तुम हार नहीं ॥

[१०]

चीज़ भई मंहगी है बज़ार में गेहूँ लगा अब डेढ़ अढ़इय्या।
भूखे रहें तन ढाँकी सकै नहिं भारत के सिसु लोग लुगैय्या ॥
टेर सुना द्रुपदी की 'रमा' गये वेगि लई पति राखि कन्हैय्या।
दीनदयाल दया करिये कस लाज बिगारत लाज रखैय्या ॥

[११]

बचऊ मोरे कालिज माँ पहुँचे सुख का बरनौं मतवारे रहें।
कपड़ा अस जैस तिलंगन के अपने तन पै नित धारे रहें ॥
सिखिगे उन नीकी बिटेवन ते अस सूघर पाटी संवारे रहें।
बनि ह्वै हैं 'रमा' पटवारी चहे गुरु खातहिं साम सकारे रहें ॥

[१२]

डर है उसको किसके बल का प्रभु जो तुम्हरे सरनागत हैं।
अब दीन दयाल न देर लगे बिगरी सब आप सुधारत हैं ॥
बल वाह 'रमा' कब कौन कहाँ तुम्हरे बिन नाथ उबारत हैं।
उसको डर क्या भवसागर को जिसको करुणानिधि तारत हैं ॥

[१३]

आज कहना है हमारा उन अमीरों के लिए।
हाथ लोहे के बने क्या दिल टटोला आपने ॥

दिल भी पत्थर का बना हिलता नहीं डुलता नहीं।
मुँह से उगले आग के जलते लुकारे आपने ॥
चाल चल करके खनाखन से भरी हैं कोठियाँ।
देश की क्या कम किया इतनी भलाई आपने ॥
बेगुनाहों का गला घोंटा तरक्की पा गये।
जड़ दिये तारीफ़ पै सलमें सितारे आपने ॥
दर्द सर होता है सुन करके गरीबों की पुकार।
शान का जौहर नहीं कब है दिखाया आपने ॥
देखकर आँखों में आँसू लुत्फ आता है तुम्हें।
मुँह चले कब दिलजलों पर तर्स खाया आपने ॥
पंगुलों की भीख पर तुम को हसद होता रहे।
ख्वाब में खैरात का आँसू बहाया आपने ॥
ऐश में देखा कभी कुछ कुढ़ गये लड़ भी गये।
नेकनीयत बन कभी करतब निभाया आपने ॥
तङ्ग गलियों में कभी भी आप जाते हैं नहीं।
मेम्बरी के वक्त तो चक्कर लगाया आपने ॥
चाल चलते कौंसिलों में आप जाने के लिए।
सर हिलाने के सिवा क्या कर दिखाया आपने ॥
देश के हित के लिए एक दो कदम चलते नहीं।
घिस न जायें पाँव खुद पै रहम खाया आपने ॥

बंद बहुएँ मर गईं पर साँस नहिं लेने दिया।
खुदबखुद को शर्म का शानी जनाया आपने ॥
जुल्म कितने हो गये इस देस में देखो 'रमा'।
किन्तु बस लाली लहू को गुल है समझा आपने ॥

———

रामप्रिया

इनका नाम महारानी रघुराज कुँवरि था। रामप्रिया कविता का नाम था। इनका जन्म संवत् १९४० में हुआ था। ये अवध के प्रतापगढ़ की महारानी थीं। आपने विदेशों की यात्रा की थी। बड़ी शिक्षिता और उत्साही थीं। स्त्री शिक्षा सम्बन्धी कामों में ये उत्साह से भाग लेती थीं। आप रामकृष्ण की भक्त थीं। आपकी कविताएँ देखिये।

[१]

मुखचंद अभाव में चंद लखै,
अरविन्दन तें सुख नैन रही री।
द्रिति देखि दिवाकर ध्यान धरें,
छवि सीय बनो दृढ़ चित्त धरी री ॥
मुसुकाय के वंक विलोकत वै,
हिय रामप्रिया में समाय रही री।
विधना दिन रैन विचार्‌यो करें,
सुनु वे बतियाँ सपनेऊँ नहीं री ॥

[२]

रघुकुल चन्द आज आनन्द !
लखि बाटिका मन लेन वारी,
मुदित माधव मानहारी।
ललित लतन लवंग संयुत,
भ्रमत भ्रमर सुढङ्ग ॥ रघुकुल० ॥
लखि युगल राजकिशोर निरखत,
बहुरि सियतन देखि हरषत।
चलत चंचल चंचलासम,
सुभग वसन सुरङ्ग ॥ रघुकुल० ॥
लखि रामप्रिया जोरी मनोहर,
मुदित मन हिय सों मनावैं।

धनुष खंडन यज्ञ मंडन,
होहिं दशरथ नन्द ॥ रघुकुल० ॥

[३]

हरषित अंग भरे हृदय उमंग भरे,
रघुवर आयो मुद चारों दिसि वै गयो ।
सुन्दर सलोने शुभ्र सुखद सिंहासन पै,
जनक सप्रेम जाय आसन जवै दयो ॥
रामप्रिया जानकी तथैव पुरवासी मुख,
पंकज कुमुद सम दूजे नृप ह्वै गयो ।
मानो मणि मंडित शिखर पै मयंक तापै,
मंजु दिनकर प्रात प्राचीसों उदय भयो ॥

[४]

किंसुक गुलाब कचनार और अनारन के,
विकसे प्रसून मलिन्द छवि छावै री ।
वेली वाम वीथिन बसंत की बहारैं देखि,
रामप्रिया सियाराम सुख उपजावै री ॥
जनक किशोरी युग करने गुलाल रोरी,
कीन्हें बरजोरी प्यारे मुख पै लगावै री ।
मानो रूप सरते निकसि अरविन्द युग,
निकसि मयंक मकरंद धरि लावै री ॥

———

युगल प्रिया

आपका नाम महारानी कलमकुमारी था। टीकमगढ़ के महाराज प्रतापसिंह जी इनके पिता थे। १९२८ में इनका जन्म हुआ था। इनकी माता बड़ी भगवद्भक्त थीं। अयोध्या का प्रसिद्ध मन्दिर कनकभवन इन्हीं का बनवाया हुआ है। अतएव माता की भगवद्भक्ति की छाप आप पर अच्छी तरह पड़ी थी। छतरपुर के राजा के साथ आपका ब्याह हुआ था। पर महारानी की अपेक्षा योगिनी बनना ही आपको अधिक पसन्द था। प्रायः समस्त तीर्थों में इन्होंने भ्रमण किया। ये पहले रामोपासक थीं, पुनः कृष्णोपासक हो गयीं। देखिये इनकी कविता नीचे उद्धृत हैं!

[१]

ब्रजमण्डल अमरत बरसै री ।
जसुदानन्दन गोप-गोपिन को सुख सोहाग उपजै सरसै री ॥
बाढ़ी लहर अंग-अंगन में जमुना तीर नीर उछरै री ॥
बरसत कुसुम देव अंबरतें सुरतिय दरसन हित तरसै री ॥
कदली बन्दनवार बंधाये तोरन धुज सौथिया दरसै री ।
हरद दूब दधि रोचन साजै मंगल कलस देख हरसै री ॥
नाचै गावै रंग वढ़ावै जो जाके मन में भावै री ।
शुभ सहनाई बजत रात-दिन चहुँदिसि आनंदघन छावै री ॥
ढाढ़ी ढाढ़िन नाचि रिझावै जो चाहे जो, सो पावै री ।
पलना ललना झूल रही है जसुदा मंगल गुन गावै री ॥
करै निछावर तन मन सरवस जो ब्रजनन्दन को जावै री ।
जुगल प्रिया यह नन्द महोत्सव दिन प्रति वा ब्रज में होवै री ॥

[२]

जय श्री जमुने कलिमल-तारिन ।
करु करुना प्रीतम की प्यारी भँवर तरंग मनोहर धारिनि ॥
पुलिन बेलि कुसुमित सोभित अति कंचन चञ्चरीक गुञ्जारिनि ।
विहरत जीव जन्तु पसु पंछी स्याम रूप-रस रंग बिहारिनि ॥
जेजन मज्जन करत विमलजल तिनको सब सुख मंगल कारिनी ।
जुगल प्रिया हूजै कृपालु अब दीजै कृष्णभक्ति अनपायिनी ॥

[३]

नीर प्रिय लागे जमुना तेरो।
जा दिन दरस परस ना पाऊँ बिकल होत जिय मेरो॥
नित्य नहाऊँ तब सुख पाऊँ होत अलिन सों भेरो।
जुगल प्रिया घट भरि कर लीन्हें सदाचित चेरो॥

[४]

बगुला भक्तन सों डरिये री।
इक पग ठाढ़े ध्यान धरत है दीन मीन लौं किमि बचिए री॥
ऊपरते उज्जल रंग दीखत हिये कपट हिंसक लखिये री।
इनते दूर ही रहे भलाई निकट गये फंदनि फँसिये री।
जुगल प्रिया मायावी पूरे भूलि न इन संग पल बसिए री।

[५]

मन तुम मलिनता तजि देहु।
सरन गहु गोविन्द की अब करत कासें नेहु॥
कौन अपने आप का मैं परे पाया सेहु।
आज दिन लौ कहाँ पायो कहाँ पैहो खेहु।
विपिन वृन्दावास करु जो सब सुखनि को गेहु।
नाम मुख में ध्यान हिय में नैन दरसन लेहु॥
छांड़ि कपट कलंक जग में सार साँचौ एहु।
जुगल प्रिया बन चित्त चातक स्याम स्वाती सेहु॥

[६]

जुगल छवि कब नैनन में आवै।
मोर मुकुट की लटक चन्द्रिका सटकारी लट भावै ॥
गर गुंजा गजरा फूलन के फूल से बैन सुनावै।
नीलदुकूल पीत पट भूषण मन भावन दरसावै ॥
कटि किंकिनि कंकन कर कमलनि क्वनित मधुर धुन छावै।
जुगल प्रिया पद पदुम परसिकै अनत नहिं सच पावै ॥

[७]

वृन्दावन रस काहि न भावै।
विटप बल्लरी हरी हरी त्यों गिरिवर जमुना क्यों न सुहावै ॥
खग मृग पुंज कुंज कुंजनि मैं श्रीराधाबल्लभ गुन गावै।
पै हिंसक बंचक रंचक यह सुख सुख सपने में लेस न पावै ॥
धनि व्रजराज, धनि वृन्दावन धनि, रसिक अनन्य, जुगुल वपु ध्यावै ॥
जुगल प्रिया जीवन व्रज सांचो तनरु वापि मृग जल को धावै ॥

[८]

जय गंगे जय तारनितरनि।
भवर तरंग उमंगति लहरी मंगलरेनु विमल बुद्धि करनि ॥
पुलिन प्रतीत मन्द मारुत बह निर्मल धार धवल छवि धरनि।
जेते जंतु जीव जल थल नभ सब की तीन ताप तम हरनि ॥

हरि चरनारविन्द ते प्रगटी ब्रह्म कमण्डल सिर आभरनि।
शङ्कर सीस सौत गिरिजा की भागीरथ रथ की अनुचरनि॥
गिरिवर नगर ग्रामवल वेष्ठित प्रबल वेग बारिधि बट वरनि।
दरस परस मज्जन सुपानते दूर होय दुख दारिद दरनि॥
सुलभत्रिवर्ग स्वर्ग अपवर्गहु कामधेनु सुख सफल वितरनि।
जय श्रीसुरसम हरि रति दीजै जुगल प्रिया की असरन सरनि॥

[९]

यह तन इक दिन होय जु छारा।
नाम, निशान न रहि है रंचहु भूलि जायगो सब संसारा।
काल घरी पूजी जब हू है लगै न छोड़त भ्रम जारा॥
या माया नरिन के बस में भूलि गयौ सुखसिंधु अपारा।
जुगल प्रिया अजहूँ किन चेतत मिलि हैं प्रीतम प्यारा।

[१०]

जयति रसिकिनि राधिका जयति रसिकनदनन्द,
जयति चारु चन्दावली जय वृन्दावनचन्द।
जय ब्रजराज, जमुनजल जय गिरिवर नन्दगांव,
बरसाने वृन्दा विपिन नित्य केलि को धाय।
जयति माध्वमत माधुरी जयति कृष्ण चैतन्य,
जयति सदा हरिवंश हित व्यास सुरसिकानन्य।

करो कृपा सब रसिक जन मो अनाथ पै आय,
दीजै मोहि मिलाय श्री राधावर जदुराय।
नहिं धन कौ नहिं मान की नहिं विद्या की चाह,
युगलप्रिया चाहै सदा जुगल स्वरूप अथाह।

[११]

मङ्गल आरति प्रिया प्रीतम की मङ्गल प्रीति रीति दोउन की।
मङ्गल कान्ति हँसाने की दसनानन की मङ्गल मुरली वीना धुनि की॥
मङ्गल बनिक त्रिभङ्गी हरि की मङ्गल सेवा सब सहचरि की।
मङ्गल सिर चन्द्रिका मुकुट की मङ्गल छबि नैननि में अटकी॥
मङ्गल छटा फबी अङ्ग अङ्ग की मङ्गल गौर श्याम रस रङ्ग की।
मङ्गल अति कटि पियरे पट की मङ्गल चितवनि नागर नट की॥
मङ्गल सोभा कमल नैन की मङ्गल माधुरी मृदुल बैन की।
मङ्गल वृन्दावन मग अटकी मङ्गल क्रीडन जमुना तट की॥
मङ्गल चरन अरुन तरुवन की मङ्गल करनि भक्ति हरिजन की।
मङ्गल जुगल प्रिया भावन की मङ्गल श्री राधाजीवन की॥

शब्दार्थ, टिप्पणियाँ और जानने योग्य बातें

मीराबाई

छूँ = हूँ । थाँ = उनको । कुलरा = कुलवाले । नातीं = सम्बन्धी । ज्यूँ = जिस तरह । राजित = शोभा देता है । छुद्र घंटिका = छोटी घण्टी । वछल = कृपा करने वाले । गरे = गल जाना । जग्य = यज्ञ, होम । अंसुवन = आँसुओं । थारी = तुम्हारी । सांवरा = सांवला, कृष्ण जी । धुई = धुआं । भगवा = लँगोटी लगाना । सनेस = सन्देश । पाना = पान । थाने = इससे । बावल = पागल । करक = दुख । मूँदड़ी = अँगूठी । किलोल = खेल । लगन = प्रेम । कछुवै = कुछ भी । तरनन = तरजाने की, स्वर्ग जाने की । कानि = इज्जत । डारि = डालकर । गुंजमाल = एक तरह की माला । पियै कोई = कोई मट्ठा पीता है । जोहि = इन्तज़ार । मोती = मुझको । त्रिविध ज्वाला = तीन तरह के दुःख दैहिक, दैविक और भौतिक । प्रहलाद = एक भक्त का नाम है । ध्रुव = एक भक्त का नाम था । बलि = एक राजा का नाम था । गौतम घरन = गौतम ऋषि की स्त्री अहिल्या । गरव = गर्व, घमण्ड । मघवा = इन्द्र । कबीलो = कुटुम्ब । राणा = राजा । भुजँग = साँप । शालग्राम = एक देवता का नाम है । दीवानी = पागल । सांवलिया = कृष्णजी । जन = आदमी, भक्त । भीर = दुःख । नरहरि = नृसिंह । हिरनाकस्यप = प्रहलाद के पिता का

नाम था, यह राक्षस था। खत = चिट्ठी, बही। कनक = स
अमरत = अमृत। नटै = सुख। पटै = बनती है। सिगरी = स
रैन = रात।

नोट—मीराबाई की कविता में 'ण' का प्रयोग ज्यादा है; क्योंकि राजपूताना की बोली में 'ण' का उच्चारण बहुत होत इसका असली रूप 'न' है।

सहजोबाई

जज्ञ = यज्ञ, होम। इन्दर = इन्द्र। बखान = वर्णन। मिरग = मोह का हिरन या मृग का मोह। सीस = शिर। तृ तिनका। सील = सहनशीलता। छमा = क्षमा। धन = ध दुष्टी = दुष्ट लोग। गहनी = ग्रहण करना। लौ लाई = प्रेम क चिताई = चेत जाना, ठीक हो जाना। मोषा = प्रेम। धारर इच्छा। अस्तुति = प्रार्थना। इस्थिर = एकाग्र करना। उदार उदास रहना। नखसिख = नख से सिर तक। सीतलताई = लता। निर्गुण = गुणवान। ब्रह्मगियानी = ब्रह्मज्ञानी। सहजि सहजोबाई। छीजै = नष्ट होना। बरन = वर्ण, तरह। सद्वा स्वर्गका रहने वाला। सीत = ठंढक। सस्तर = हथियार। आ उड़ाना। रंकता = गरीबी। परलय = प्रलय। उतपति = पैदा किरिया = काम। षटदर्शन = छः शास्त्र। अलेस = योग्य। आ इज्ज़त। छीर = दूध। निर्णय = अलग अलग क

समाय = समाप्ति। हितू = भलाई करने वाला। बाहीं = भुजा। जमघिरैं = यमराज के घेरे में। सुरति = स्मरण। भजावो = भगाओ। अनहद = ज्ञान की। सेस = शेषनाग। महेसुर = शिव। जुअन = जुआ। विज्ञानी = ज्ञानी। सिरानी = लय हो गई।

दयाबाई

छत्रपति = राजा का खिताब है। स्वारथबंदी = स्वार्थ से घिरा हुआ। पीव = प्यारा। दया दया की लहर कर = दयाबाई कहती हैं कि दया की लहर आने दीजिये, हृदय को मत तड़पावो। अटपटो = टेढ़ा मेढ़ा। थिर = स्थिर। अविद्या = अज्ञान। तम = अंधेरा। अभेद = बिना भेद वाला। अरध उरध = ऊपर नीचे। विवर्त = खोह। निरवान = मोक्ष। निराकार = बिना आकार वाला। पग पाछे नहिं देत = पीछे पैर नहीं हटाता। दृढ़ = मजबूत। कुँ मारि = को मार कर। सूरा = बहादुर। मेहर = कृपा। निरपच्छी = विना पंख वाले। पच्छ = पर। सनाथ = मालिक सहित। दरिया = नदी। तर = नीचे। अप = अपनी। करार = वादा। कबूली = इकरार। लबार = झूँठा। लच्छन = लक्षण। नरनाए = सिर नीचा करना। बिर्द की पैज = प्रतिज्ञा करने का प्रण। थोथो = खोखला।

साँई

पौरिया = ड्योढ़ीदार। दाखै = अंगूर। विचित्त = विचित्र। लोक = दुनिया। तिस = उसके। वारुणी = शराब। दरवेश = एक

जाति है जो घूम घूम कर चीजें बेचती है। परवेश = चला जाना

रघुवंश कुमारी

कोटि = करोड़ों। तीरथ = तीर्थ। करीर = एक पेड़ का है। सनेह = प्रेम। सुरधाम = स्वर्ग। उरधाम = हृदय कलकीर = सुन्दर तोता। ऋतुराज = बसंत। तीछन = रद = दाँत। विद्रुम = हीरा। वाम = बाईं ओर।

सुभद्रा देवी चौहान

हरबोलों = पुराने गीत गाने वाले भाँट। सुभट = व विरुदावलि सी = बड़ाई के समान। मुदित = प्रसन्न। विरान वीरान, उजाड़। अन्तरतम = भीतर से। तेग = तलव कालिन्दी = यमुना। समारोह = जलसा। बलि = निछावर हो प्रेमोन्मत्ता = प्रेम में मतवाली। स्वातन्त्र्य प्रभात = स्वतंत्रता सवेरा। अभिनंदन = स्वागत। दूनी = दूना। अतुलित = अधि रँगरलियों = प्रेम के खेल। विश्रांति = आराम। संताप = दु मंजुल = सुन्दर। नवेली = युवती। रम्य वदन = सुन्दर मु खिन्नमना = दुखी हृदयवाली। क्रम-क्रम = धीरे धीरे। रजभूमि मिट्टी की ज़मीन। आख्यान = कहानी, कथा। राखीबंद = र बँधा हुआ।

तोरन देवी लली

संचार = पैदा हुआ। ध्येयप्राप्ति = उद्देश्य को पाना। अति

मूर्ति = बड़ी सुन्दर मूर्ति। विशाल = बड़ा। अनूप = सुन्दर। पयोधि = समुद्र। अनुरिक्त = प्रेम। सुखद = सुख देने वाला। कल्याण = भलाई। आत्म-अभिमान = अपनापन। अनुपम = सुन्दर। विकास = बढ़ना। सुमिरन मात्र = सिर्फ़ याद करने से। करुणानिधि = करुणा के समुद्र अर्थात् ईश्वर। अस्तित्व = नाम, निशान। विजय पंथ = जीत का रास्ता। प्रियरण कुशल = प्यारी लड़ाई में कुशल। शोणित = खून। युगनैन = दोनों आँखें। आत्मार्पण = अपने को सौंप देना। कर्मवीर = कर्म के वीर। कर्मक्षेत्र = कार्य करने का क्षेत्र। स्तनपान = दूध पीना।

महादेवी वर्मा

विरहाकुल = विरह में व्याकुल। सर = तालाब। नलिनी = कमलिनी। अभिताप = अच्छाई। तोष = संतोष। नयनाम्बुज = कमल के समान आँखें। दीनाकृत = दुखिया की तरह। मुकुल = फूल। कंज = कमल। मंजु = सुन्दर। विपिन = जंगल। पुनीत = पवित्र। विधाता = ब्रह्मा। प्रतिमा = मूर्ति। शैशव = बचपन। अर्थ = काम के लिए। अनभिज्ञ = नादान। आपदाएँ = तकलीफें। जीवनाहुति = शरीर को निछावर करना। कलिका = कली। अवनति = घटती। आह्लाद = खुशी। श्रीहीन कांतिहीन। पावनता = पवित्रता। अङ्क = गोद। धरा = पृथ्वी। चाहक = चाहने वाले। असु = आँसू। भाता = अच्छा लगता।

नीरव = सुनसान। उच्छ्वास = आह करना, ज़ोर से साँस ले॰ क्षीर निधि = दूध का समुद्र। निर्झर = झरना। सुभग = सुन्द॰ अलक्षित = एकाएक। तृष्णा = मोह। ऋतुराज = बसंत। उन्॰ लन = खोलना। विच्छेद = जुदाई। विस्मृत = भूल जान॰ भवितव्यता = सुन्दरता। मंजु = सुन्दर। हीरक = हीरा। कण॰ धूल। उत्कर्ष = उत्थान। आसक्ति = मोहित होना। वैराग॰ संन्यास लेना।

रसिक बिहारी

थारी = तुम्हारी। अलसाणी = अलसाई हुई। माँखड़ियाँ॰ मक्खियों। कलश = घड़ा। बाम = स्त्री। विधना = ब्रह्मा। परजंक॰ शैय्या। पानि = हाथ। रंक = गरीब।

रत्नकुँवरि बीबी

बिरद = बड़ाई। आतुर = जल्दी। घनेरे = अधिक। सतत॰ हमेशा। ग्राह = मगर। ग्रसित = पकड़ना। बसन = कपड़॰ थाप्यो = रक्खा। कुलकेत = कुल के स्वामी। कुरुखेत = कुरुक्षे॰ वाहन = सवारी। सौज = सामान। कटक = झुंड। भूपाल॰ राजा। करिवर = श्रेष्ठ हाथी। तुरंग = घोड़ा। अमित = अधिक॰ छिति = पृथ्वी। लघु = छोटा। दीरघ = बड़ा। सनेह = प्रेम॰ अकबार = भेंटना। इक = एक। बधाय = बधाई।

प्रतापबाला

कोटिक = करोड़ों। वारी = निछावर होना। काम = कामदेव। दाड़िम = अनार। दसन = दांत। अधर = ओठ। अरुणारे = लाल। सुधा = अमृत। जामसुता = प्रतापबाला का उपनाम है। कंचन = सोना। पखावज = एक बाजा। भक्त बछल = भक्तों के पालन करने वाले। मोमन = मेरे मन की। अनंग = कामदेव। कोटि = करोड़ों।

सुँदरि कुँवरि बाई

लहि = लेकर। झष = मछली। अहि = साँप। द्रुमन = पेड़ों। चतुरंग = चतुरंगिनी। चमू = झुंड। चाप = धनुष। कटि = कमर। निषंग = तरकस। रव = आवाज़। वितान = तम्बू।

खगनियाँ

बासन = बर्तन।

बुन्देलाबाला

घालक = मारनेवाले। शालक = दुख पहुँचानेवाले। प्रच्छालक = धोनेवाले। भव्यता = सुन्दरता। आत्म-विसर्जन = प्राण त्याग करना। अवतंस = पैदा हुए।

रमादेवी

ज्यों = मानो। वामता = टेढ़ापन। निसाकर = चन्द्रमा। दिवाकर = सूर्य्य। नीरज = कमल।

राम प्रिया

अरविन्द = कमल। द्विति = चमक। शुभ्र = साफ। प्राचीसों पूरब से। मयंक = चंद्रमा। मकरन्द = शहद।

युगल प्रिया

कलिमल = कलियुगी पाप। अलिन = भंवरे। कलंक = पा सरकाकी = सरकनेवाले। नीलदुकूल = नील कपड़ा। मज्जन नहाना। अपवर्ग = मोक्ष। कामधेनु = देवताओं की गाय। ‍ सानै = एक गाँव का नाम। केलि = खेल। माध्वमत = एक ‍ का नाम। दसननि = दांतों।

शुद्ध संस्कृत शब्द

इस पुस्तक की रचनाओं में अनेक ऐसे शब्द आए हैं जिन रूप बिगड़ गया है। यहाँ कुछ बिगड़े हुए शब्दों का शुद्ध ‍ दिया जाता है। पाठिकाओं को पढ़ते समय शब्दों के शुद्ध-अशु का भी ध्यान रखना चाहिए।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
जज्ञ	यज्ञ	छिमा	क्षमा
सनेस	सन्देश	अस्तुति	स्तुति
अमरत	अमृत	सस्तर	शस्त्र
सीस	शीश	परलय	प्रलय
सील	शील		

दन्त कथायें

कई दन्त कथायें भी कविताओं के अन्दर आई हैं। उनमें से कुछ यह हैं—

प्रह्लाद—पुराने ज़माने में हिरण्यकश्यप नाम का एक राक्षस था। प्रह्लाद उसी का लड़का था। यह ईश्वर का बड़ा भक्त था। इसका पिता, ईश्वर का नाम लेने के बदले प्रह्लाद को बड़ा दण्ड देता था। अन्त में नृसिंह का रूप धर कर ईश्वर ने इसकी रक्षा की और इसके पिता को मारा था।

ध्रुव—यह भी पुराने ज़माने में एक बालक था। ईश्वर का बड़ा भक्त था। अन्त में ईश्वर ने ही इसकी रक्षा की थी।

बलि—पुराने ज़माने में एक राजा का नाम था। यह अपने को बड़ा दानी समझता था। ईश्वर ने बावन का रूप धारण कर इसको छला था।

अहिल्या—यह गौतम ऋषि की स्त्री थी। इसके पति ने इसको श्राप दे दिया था, इससे यह पत्थर हो गई थी। रामचन्द्र जी के पैरों के छू जाने पर फिर स्त्री हो गई।

धना—एक भक्त का नाम था।

कबीर—एक भक्त हो गये हैं। इन्होंने बहुत सी कवित लिखी हैं। कबीर पन्थ इन्होंने चलाया है।

रैदास—यह जाति के चमार थे। ये अच्छे भक्तों में गि जाते थे।

नरसीमेहता—यह गुजरात के सन्त साधू हो गये हैं।
